नेहरू बाल पुस्तकालय

क्षमा शर्मा की चुनिंदा बाल कहानियाँ

चित्र

मित्रारूण हलधर



राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत

NATIONAL BOOK TRUST, INDIA

9 से 11 वर्ष के बच्चों के लिए

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत की स्थापना पुस्तकों के प्रोन्नयन और पठन अभिरुचि के विकास के उद्देश्य से सन् 1957 में भारत सरकार (उच्चतर शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय) द्वारा की गई थी। न्यास द्वारा हिंदी, अँग्रेजी सहित 30 से अधिक भाषाओं व बोलियों में पुस्तकों का प्रकाशन किया जाता है। बच्चों की पुस्तकों का प्रकाशन सदैव से संस्था की प्राथमिकता रही है।



ISBN 978-81-237-8687-2

पहला संस्करण : 2018 (*शक* 1940)

Kshma Sharma ki Chuninda Baal Kahaniyan (*Hindi Original*)

₹ 80.00

निदेशक, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत
नेहरू भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया, फ़ेज-II
वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070 द्वारा प्रकाशित
www.nbtindia.gov.in

अनुक्रम




nbt.india
एकः सूते सकलम्



कहाँ से आएगा

गर्मी के दिन थे। सर्दी में जो सूरज दिखाई देने से डरता था, वही गर्मियों के दिनों में छाती ताने सामने आ खड़ा होता।

जंगल में तोते थे। गौरैया, चील, मोर, टिटहरी, मेढक, हिरन, शेर, चीते, हाथी सब-के-सब इस एक सूरज के कारण त्राहि-त्राहि करने लगते। पेड़ों को इतनी गर्मी लगती कि वे अपने कपड़े यानी कि पत्ते उखाड़ फेंकते। जानवर छाया की तलाश में मारे-मारे फिरते और तो और सूरज का पेट भी इतना बड़ा हो जाता कि वह सारी नदियों, तालाबों, कुओं का पानी गटक कर जाता है।

एक बार हाथी को सूरज पर गुस्सा आया। चिल्लाकर बोला—"सूरज दादा यह आपकी सरासर नाइंसाफी है।"

सूरज ने हाथी की तरफ देखा। बोला—"नाइंसाफी! कैसी नाइंसाफी बेटा?"

"तुमको प्यास लगती है तो तुम हमारे हिस्से का पानी पी जाते हो!"

"तुम्हारे हिस्से का?" सूरज को बड़ा आश्चर्य हुआ—"वह कैसे?"

"ज्यादा भोले न बनो दादा, सारी नदियाँ सूख चुकी हैं। तालाबों में एक बूँद तक पानी नहीं बचा। कुओं से बाल्टी खाली लौट आती है।"

"तो बेटा में क्या करूँ! आजकल मुझे प्यास ही इतनी लगती है। वह तो वश नहीं चलता, नहीं तो मैं पूरा समुद्र ही पी जाऊँ। वैसे तुम नदी और तालाबों से जाकर क्यों नहीं पूछते कि वे तुम्हारे लिए थोड़ा-सा पानी बचाकर क्यों नहीं रखते?"

सभी पशु-पक्षी मिलकर नदी के पास गए। नदी बोली—“मैं धरती पर बहती हूँ आसमान में नहीं जा सकती। सूरज को यह बात पता है। तभी तो वह सारा पानी सोख लेता है।”

“मगर हम तो आसमान में उड़ते हैं, तब भी हम सूरज के पास नहीं पहुँच सकते। एक तो वह बहुत दूर है। दूसरे उसके पास जाया ही नहीं जा सकता। वह इतना गरम है कि कोई उसकी गर्मी बर्दाश्त नहीं कर सकता।” कुछ पक्षियों ने कहा।

“तो क्या हमेशा हम गर्मियों में प्यास से परेशान हो मारे-मारे फिरें!” नीलगाय बोली।

“मिट्ठू भाई तुम्हारा पारा भी जल्दी ही चढ़ जाता है। अरे मुझे क्या पता क्या समस्या है! सुबह से सोई पड़ी थी। अब उठी तो तुम लोगों से मिलने चली आई। मुझे बताओ मामला क्या है?”

“मामला बता भी दें तो क्या तू सुलझा देगी? जिसे इतने लोग नहीं सुलझा पाए, उसे यह अकेली कोतवालनी निपटाने आई हैं!” रीछ ने मजाक उड़ाया।

“ऐसे किसी का मजाक उड़ाते हैं!” एक बूढ़ी हथिनी ने लोमड़ी को डपटा—“हो सकता है वह कुछ बता सके।” कहते हुए हथिनी ने लोमड़ी को सारी बात बता दी। सुनकर लोमड़ी भी सोच में डूब गई।

“एक विचार आया है!” लोमड़ी बोली।

“क्या... क्या! हमें भी बताओ?” सभी पशु-पक्षियों ने कहा।

“क्यों न हम एक ऐसा तालाब खोदें जिस पर सूरज की नजर ही न पड़े।” लोमड़ी ने समझाया।

“मगर ऐसा कैसे हो सकता है भला कि सूरज की नजर ही न पड़े। संसार का ऐसा कौन-सा कोना है जहाँ सूरज की किरणें न पहुँचती हों!”

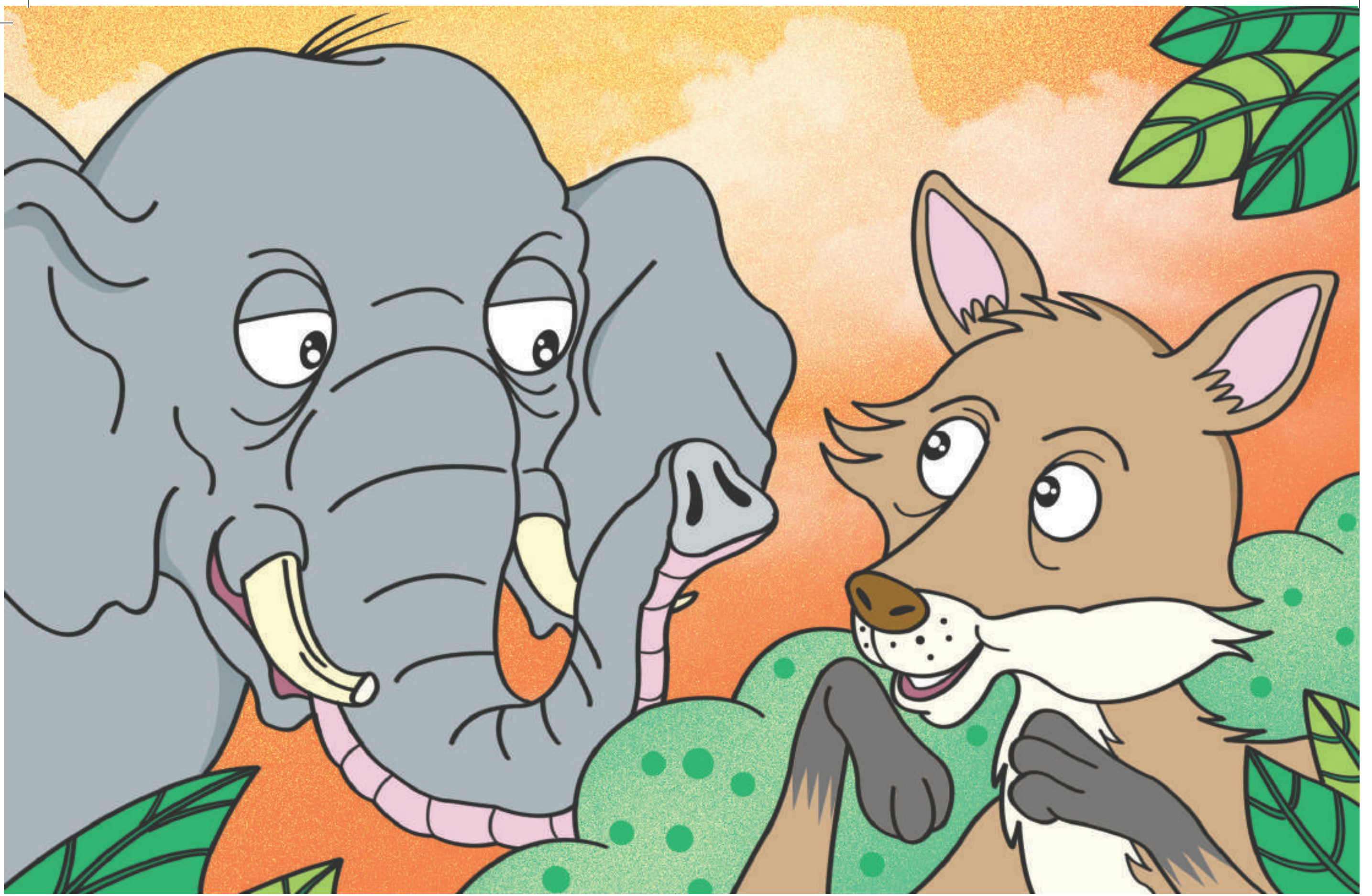
“आप लोग मेरी बात का मतलब नहीं समझे।”

“तो तुम ही हमें अपनी बात का मतलब समझा दो।”

“प्यारे भाइयो-बहनो, न तो जल्दबाजी में कोई काम करना चाहिए, न असफलता से डरना चाहिए। असफलता ही सफल बनाती है।”

“अच्छा बहुत हो गया, लोमड़ी की जगह उपदेशक बन गई हो जल्दी बताओ।” तोता फिर चीखा।





“अच्छा मिट्ठू जी अगर आप ऐसे ही चिल्लाते रहे तो मैं चली।” लोमड़ी भी गुस्सा हो गई। जैसे ही उसने एक छलाँग लगाई कि सारे जानवर उसके पीछे दौड़े—“अरे-अरे लोमड़ी बहन, इतनी भी नाराजगी कैसी? वह तोता तो पागल है! तुम इन तोतों की आदतें तो जानती ही हो, रात-दिन टें-टें किया करते हैं। जिन पेड़ों पर ये रहते हैं, दूसरे पक्षियों का रहना दूभर कर देते हैं। हमने तो तुमसे कुछ नहीं कहा।”

लोमड़ी ने थोड़ी-बहुत मान-मनौवल करवाई, फिर जानवरों के बीच आकर बैठ गई।

“हाँ तो मैं कह रही थी कि सारे पशु-पक्षी मिलकर एक तालाब खोदें।”

“अच्छा! मगर उसमें पानी कहाँ से आएगा?” उसी बूढ़ी हथिनी ने पूछा।

“एक काम तो हम यह कर सकते हैं कि नदी से एक नाली तालाब तक खोद दें।” लोमड़ी ने कहा।

“मगर नदी में तो खुद ही पानी नहीं है। अभी हम वहीं से तो आ रहे हैं!” रीछ कहने लगा।

“तो भी चिंता की कोई बात नहीं, कुछ दिनों बाद बारिश होने वाली है। हम नीची जगह पर तालाब खोदेंगे जिससे कि बारिश का सारा पानी उसमें भर जाएगा।”

“लेकिन क्या इतने पानी से हम सबकी प्यास बुझ जाएगी!” नीलगाय ने शंका प्रकट की।

“अरे भई सर्दियों में तो नदी में बहुत पानी रहता है, तब वहाँ से नाली के द्वारा तालाब में पानी आ जाया करेगा। इस तरह पूरे साल हमें पानी की कमी नहीं रहा करेगी।” लोमड़ी ने कहा।

“अच्छा तो अब पहले तय किया जाए कि तालाब कहाँ खोदा जाए!” हाथी ने कहा।

“नहीं-नहीं पहले यह बताया जाए कि हम उसे सूरज की नजरों से कैसे बचाएँगे!” छोटी गौरैया जो बड़ी देर से सबकी बातें सुन रही थी, चहकी।

लोमड़ी हँसी-----“दोनों बातें ही एक हैं!”

“कैसे?” सभी एक साथ बोले।

“तालाब हम ऐसी जगह खोदेंगे जहाँ घने पेड़ हों, सूरज की किरणें कम आती हों। कम गर्मी होगी तो पानी भी भाप बनकर नहीं उड़ेगा बस!”

(1988)





बदल गया रास्ता

आज से तीन बरस पहले की बात होगी, राम और श्याम कन्नौज स्टेशन के पास ही रहते थे। घर से स्कूल थोड़ी दूरी पर था।

लोग देखते श्याम अपने बस्ते के साथ-साथ बड़े भाई राम का बस्ता भी उठाकर चलता था। कारण, राम का एक पैर दूसरे पैर से थोड़ा छोटा था। वह ठीक से चल नहीं पाता था। श्याम चाहता था, बड़े भाई राम को कोई तकलीफ न हो। हालाँकि राम उम्र में उससे सिर्फ दो वर्ष बड़ा था। लेकिन श्याम उसे बहुत चाहता था। उसे अपने भाई की विकलांगता से बहुत दुःख होता था।

एक दिन राम और श्याम स्कूल जा रहे थे कि मोहल्ले के शरारती बच्चे जमा हो गए।

वे राम को "लंगड़ा"-"लंगड़ा" कहकर चिढ़ाने लगे। श्याम बस्ता रखकर उन्हें मारने दौड़ा तो उसे धक्का देकर गिरा दिया और दोनों के बस्ते उठाकर भाग गए।

बस्ता नहीं था तो दोनों बच्चे स्कूल कैसे जाते? वे रोते हुए घर लौट आए। माता-पिता को सारी बात बताई।

अगले दिन पिता दोनों बच्चों को स्कूल छोड़ने गए। प्रधानाचार्य भी क्या करते, शरारती लड़के कोई उनके स्कूल के तो थे नहीं।

पिता उन दोनों को दो-तीन दिन तक छोड़ने जाते रहे। मगर कब तक जाते? उन्हें भी तो अपनी नौकरी करनी थी।

चौथे दिन राम और श्याम स्कूल गए। रास्ते में फिर उन लड़कों ने इन दोनों बच्चों को तंग किया। जब शाम को घर आकर माँ से शिकायत की तो वह बोलीं—"अब तुम लोगों के झगड़े निपटाने रोज-रोज कौन जा सकता है। पिताजी नौकरी करें या तुम्हें छोड़ने जाएँ। अपनी समस्याओं को आराम से सुलझाओ। जिस वक्त वे लड़के वहाँ होते हैं, उससे कुछ देर पहले चले जाया करो या बाद में। नहीं तो रास्ता बदल लो।"

"पहले ही भैया को चलने में इतनी दिक्कत होती है। रास्ता बदलें तो कितना चलना पड़ेगा" श्याम बोला।

"श्याम, माँ ठीक कहती है। हम दूसरे रास्ते से चले जाया करेंगे। पहले-पहल थोड़ी दिक्कत होगी, फिर आदत पड़ जाएगी।" राम ने कहा।

राम की बात श्याम को माननी पड़ी।

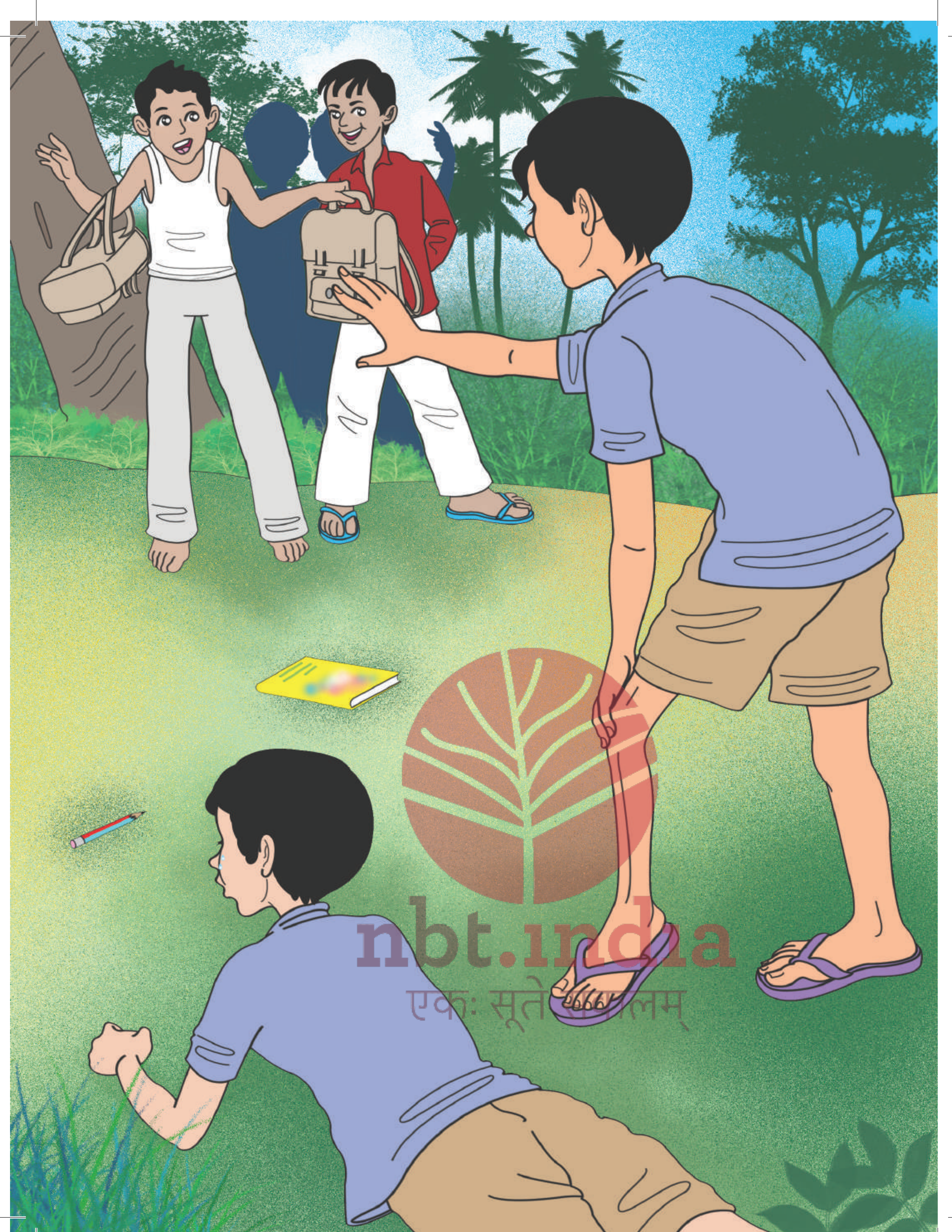
अगले दिन से वे दूसरे रास्ते से जाने लगे। राम धीरे-धीरे चल पाता था, सो बहुत देर हो जाती स्कूल पहुँचने में। उधर दो बस्तों को ढोते-ढोते श्याम के कंधे थक जाते। घर से भी जल्दी निकलना पड़ता।

रास्ते भर, राम-श्याम को तरह-तरह की बातें सुनाता, चिड़ियों, फूलों, मधुमक्खियों के बारे में बताता। उसे पता था, श्याम कितना थक जाता होगा? धीरे-धीरे दोनों भाई आराम से उस रास्ते से जाने-आने लगे।

एक दोपहर वे दोनों पढ़कर वापस लौट रहे थे कि शैतान लड़कों के उसी दल ने उन्हें आ घेरा। न जाने उन्हें कैसे पता चल गया था कि इन दोनों भाइयों के जाने-जाने का लम्बा रास्ता है। वे आकर फिर से इनका बस्ता छीनने लगे। तभी कुछ राहगीरों ने आकर उन्हें बचाया।

आज श्याम का धैर्य जवाब दे गया। बिना किसी कारण के हम कब तक पिटते रहें! इनकी शैतानी के लिए कोई सजा नहीं, जबकि हमने अपना रास्ता भी बदल दिया।

घर जाकर दोनों में से किसी ने भी आज की घटना का जिक्र नहीं किया। राम को पता था कि माता-पिता को सारी बात पता चलेगी तो उन्हें बहुत दुःख होगा। जबकि श्याम तो सभी पर गुस्सा था। माता-पिता कर ही क्या लेंगे! श्याम पूरी रात सो न सका। "कैसे इन लड़कों से निपटा जाए!" वह यही सोचता रहा।



अगली सुबह अखबार में उसने खबर पढ़ी-गुरु बलराम अखाड़े में दंगल। बस श्याम चुपचाप उठा और दंगल में जा पहुँचा। वहाँ लम्बे-तगड़े गुरु बलराम एक कोने में बैठे थे। अखाड़े में चारों तरफ उनके शिष्य जोर-आजमाइश कर रहे थे।

श्याम ने आव देखा न ताव, गुरुजी के चरणों पर गिर पड़ा। गुरुजी ने उसे उठाना चाहा तो वह उठा नहीं। बोला—"मैं तब तक नहीं उठूँगा जब तक आप मेरी बात नहीं मान लेंगे।"

"पहले बात तो बताओ" गुरुजी अचकचाकर बोले।

लेकिन श्याम उठा ही नहीं, तो गुरुजी को उसकी बात माननी पड़ी। श्याम ने गुरुजी से हाँ करवा ली कि वह आज से ही उसे अपना शिष्य बना लें। फिर उसने सारी बात बता दी।

अगले दिन जब राम और श्याम उसी रास्ते पर पहुँचे तो उन्होंने शैतान लड़कों को वहाँ अपना इंतजार करते पाया। जैसे ही वे इन दोनों की तरफ बढ़े कि गुरुजी के भेजे पहलवानों ने उन्हें धर दबोचा। वे लड़के पिटते जाते और भागते जाते। जब सारे लड़के भाग गए तो गुरुजी के शिष्य भी लौट गए। राम को विश्वास न हुआ कि श्याम इतना चतुर भी हो सकता है! उस दिन के बाद श्याम की धाक भी चारों ओर जम गई। शैतान लड़के उसे दूर से देखकर भाग जाते। श्याम काफी ताकतवर हो गया। स्कूल में जो भी खेल होते, श्याम हमेशा प्रथम आता।

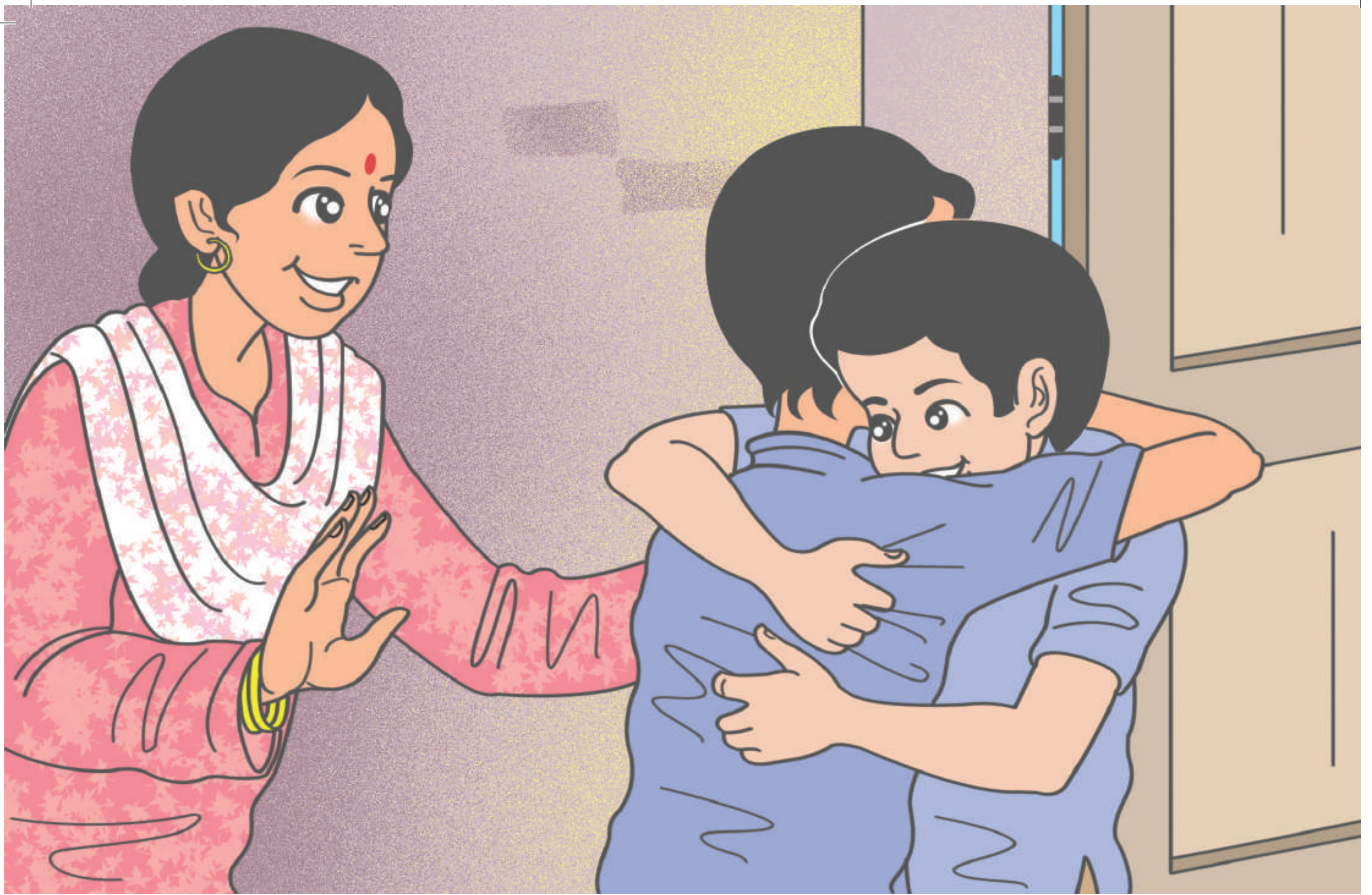
लेकिन उसमें घमंड आने लगा। अब चाहे जब वह किसी से भी उलझ बैठता। किसी से भी लड़ लेता। भला-बुरा कहता। छोटे-बड़े तक की परवाह न करता।

एक बार प्रतियोगिताओं में श्याम ने डलिया भर कर इनाम जीते। उन्हें घर लाया तो माता-पिता ने उसे बधाई दी। सबने उसकी खूब तारीफ की। लेकिन राम चुप रहा।

श्याम इनाम रखने दूसरे कमरे में गया तो माँ ने कहा—"बेटा तुम्हारे छोटे भाई ने इतने इनाम जीते इतनी प्रशंसा पाई, लेकिन लगता है तुम्हें खुशी नहीं हुई।"

श्याम दूसरे कमरे से इधर ही आ रहा था। माँ के शब्द कान में पड़े तो दरवाजे के पीछे छिपकर सुनने लगा।

"नहीं माँ, मुझे जितनी खुशी हुई है कैसे बताऊँ? वह इनाम जीतता है तो मेरी आँखें खुशी से भर आती हैं। लेकिन कल तक वह मुझे बचाने के उपाय सोचता था। पर आज



जैसे वे शैतान लड़के हमें तंग करते थे, वह भी अपने से छोटों को सताता है। और माँ, यह सब मेरे कारण हुआ है। न मैं ऐसा होता, न.....” कहते-कहते राम फूट-फूटकर रोने लगा।

श्याम दरवाजे के पीछे से निकलकर राम के गले से लिपट गया—“भैया, मुझे माफ कर दो। अपनी शक्ति के अहंकार में मैं अच्छा-बुरा तक भूल गया था। आज से कभी न झगड़ूँगा, न किसी को तंग करूँगा।”

दोनों भाइयों की ये बात सुन, माँ की भी आँखें भर आईं।

(1990)



छोटी बहन

उन दिनों फर्रुखाबाद रेलवे स्टेशन पर कुछ ही रेलवे क्वार्ट्र्स थे। आसपास दूर-दूर तक खेत फैले हुए थे। आम, जामुन, अमरूद के लम्बे-चौड़े बाग भी थे।

इन्हीं क्वार्ट्र्स में से एक में शिवस्वरूप शर्मा उर्फ शिब्बू पहलवान भी रहते थे। शिब्बू पहलवान को अपनी छोटी बहन गुड़िया से बहुत प्यार था।

गुड़िया अक्सर बीमार रहती थी। इसलिए पहलवान कोशिश करते कि कोई-न-कोई दुधारू पशु घर के सामने खूँटे से बँधा रहे। पशु की वह खूब देखभाल करते। समय पर सानी-दाना-पानी। इस बार जैसे ही पहलवान को पता चला कि गाय ने दूध देना बंद कर दिया है, तो उसी शाम उन्होंने एक बकरी खरीद ली।

गुड़िया के लिए बकरी का दूध ही बहुत था। वह दूध पीने से बचती थी। जबकि पहलवान डेढ़ पाव का गिलास ले गुड़िया की कलाई पकड़ जबर्दस्ती उसके मुँह से लगा देते। गिलास में जब तक एक बूँद भी रहती, गुड़िया के मुँह से गिलास लगा होता और वह पहलवान के पंजे में जकड़ी रहती।

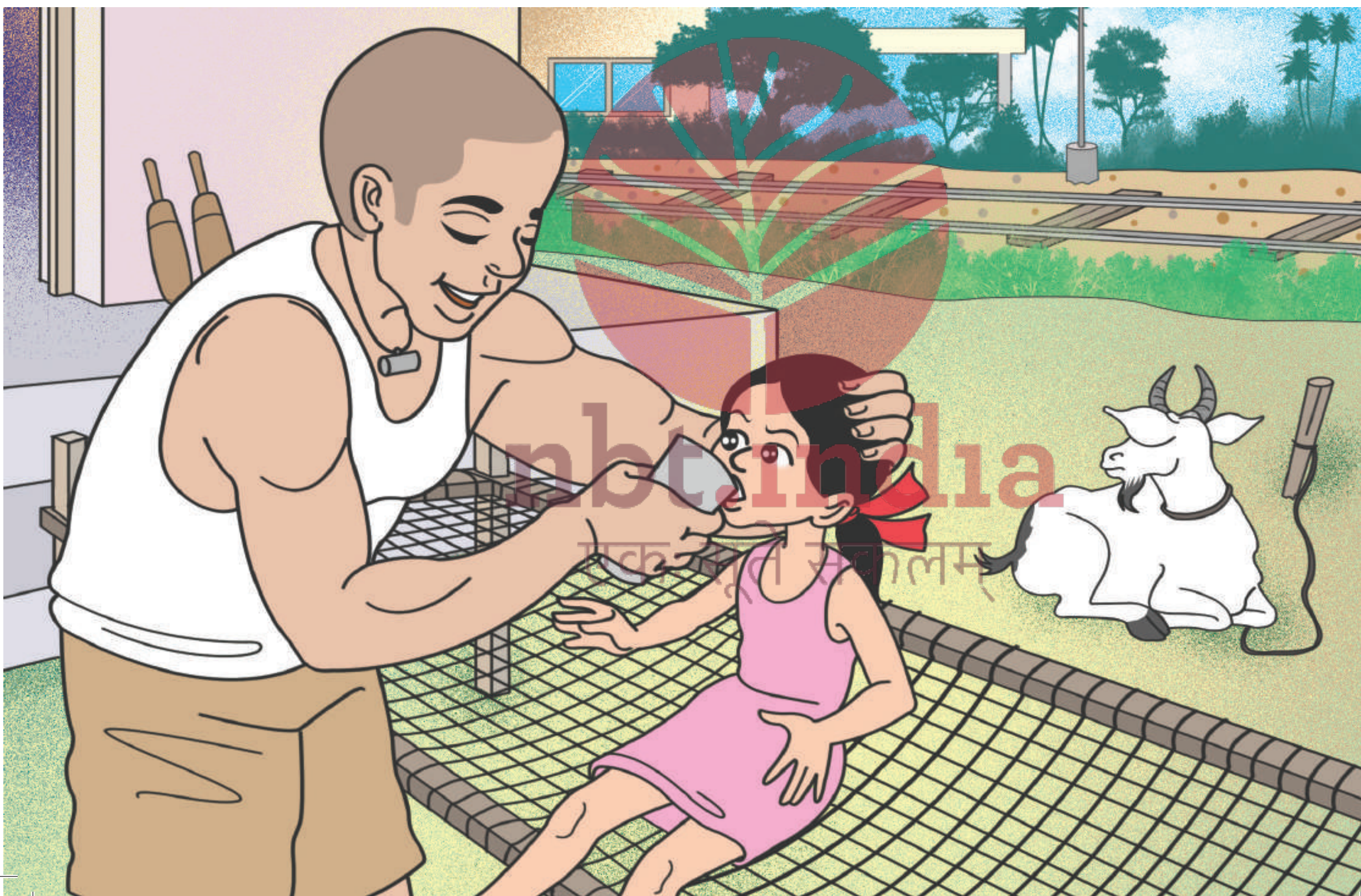
यही नहीं, पहलवान को यह भी भरोसा था कि उनकी बहन पतली-दुबली मरगिल्ली है, इसलिए वह उसे कभी पैदल नहीं जाने देते। अपने कंधे पर बिठा एक हाथ में तख्ती झुलाते स्कूल पहुँचा आते।

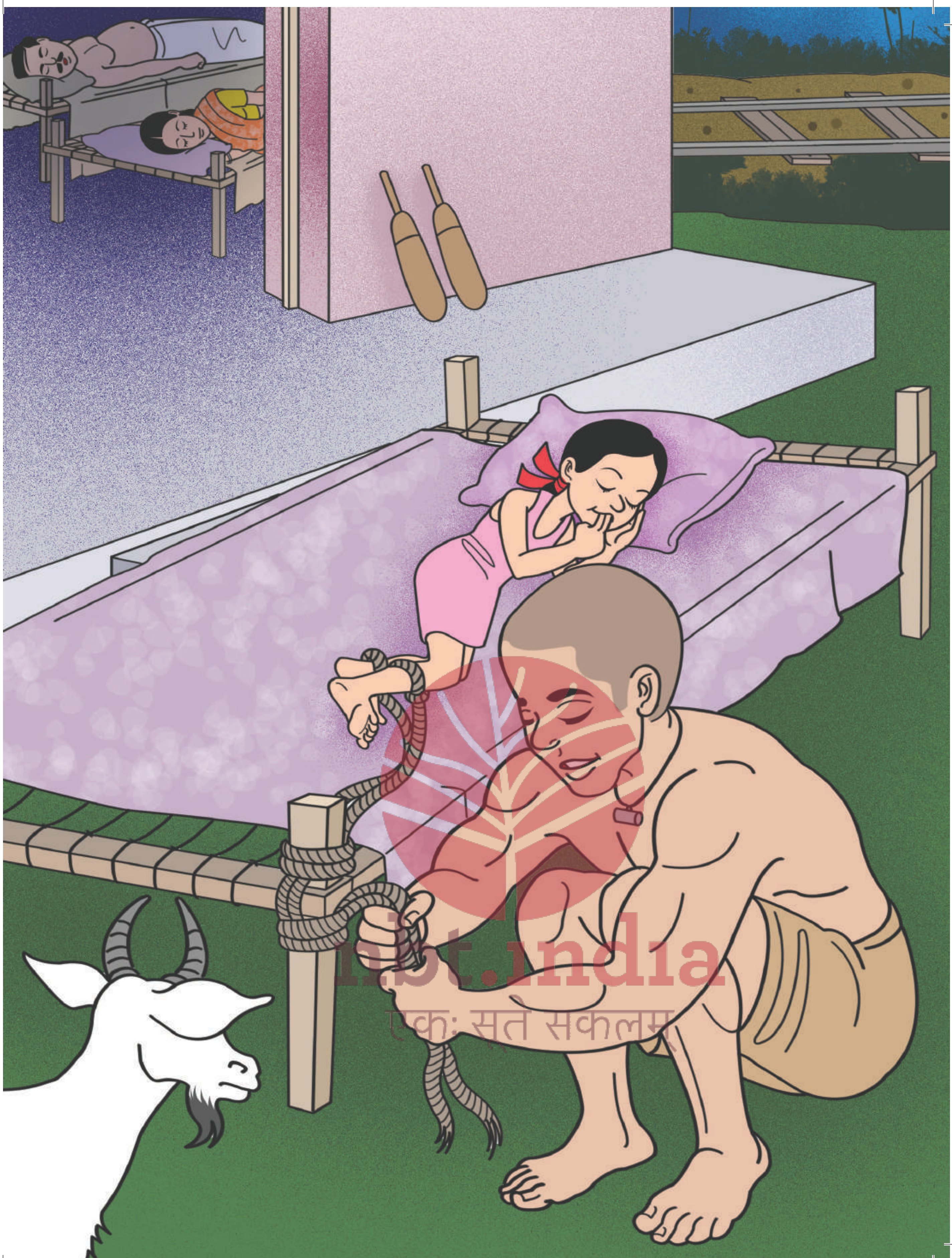
गुड़िया के इस पहलवान भाई को देख संगी-साथियों की तो क्या, बेचारे मास्टरों तक की सिट्टी-पिट्टी गुम हो जाती।

छुट्टी के वक्त पहलवान स्कूल आ पहुँचते और गुड़िया को कंधे पर उठा लम्बे-लम्बे डग भरते चले जाते। गुड़िया बेचारी बहुत कसमसाती। उसे पैदल अपनी सहेलियों के साथ चलना अच्छा लगता था। पर पहलवान उसकी एक न सुनते।

जब तक सर्दी के दिन रहे, तब तक तो ठीक था। लेकिन गर्मी आते ही गुड़िया समेत बाकी सब घरवाले घर के बाहर सहन में सोने लगे। एक बार आधी रात शोर मचा—भेड़िया आया, भेड़िया आया।

पहलवान लपक कर उठे। क्या करें! उनका मन हुआ गुड़िया को अंदर सुला आएँ। पर कमरे के अंदर बहुत गर्मी थी। रात-भर जागकर पहरा देते रहे। लेकिन मान लो आँख झपक गई और भेड़िया गुड़िया को ले भागा तो.... पहलवान ने अपने माता-पिता की ओर देखा, वे आराम से सो रहे थे। उन्हें बहुत गुस्सा आया। देखो भला इस छोटी-सी लड़की की चिंता नहीं है किसी को। और किसी को क्या, वह लड़की खुद भी





गहरी नींद में थी। गाय और बकरी भी अपनी-अपनी कमर में मुँह दिए सो रही थीं। जाग रहे थे तो केवल पहलवान। उन्हें अचानक एक उपाय सूझा। बकरी के गले से रस्सी खोल उन्होंने गुड़िया के पैर में चारपाई से बाँध दी। अगर भेड़िया आकर गुड़िया को ले जाने की कोशिश करेगा तो उसे कुछ तो देर लगेगी। कोई तो आवाज होगी। सोचते हुए पहलवान भी सो गए।

सुबह उठे तो चारों ओर शोर मचा था। उन्हें लगा, भेड़िया आया होगा। गुड़िया अपनी चारपाई पर आराम से सो रही थी। माँ जरूर जोर-जोर से कह रही थी—"अरे देखो रात ही रात में बकरी को कोई रस्सी समेत खूँटे से खोल ले गया।" पहलवान ने चुपके से रस्सी खोली और गाय की बाखर में छिपा दी, फिर बाहर निकले बकरी ढूँढ़ने। यह तो खैर ही थी कि माँ ने गुड़िया के पैर से बँधी रस्सी नहीं देखी, नहीं तो माँ मार-मार कर उन्हें पहलवान की जगह चूहा बना देती।

(1991)





पप्पू चला ढूँढ़ने शेर

पप्पू ने कभी इधर देखा, कभी उधर। बहुत-से पेड़ थे। खूब अँधेरा भी था। दूर हाथी चिंघाड़ रहा था। हवा भी तेज थी, पप्पू को जंगल का रास्ता मालूम नहीं था। कैसे जाए? फिर भी वह आगे बढ़ा। कुछ दूर गया था कि एक बड़ के पेड़ की जड़ों में उलझ गया। बड़ी मुश्किल से निकला तो एक लम्बा-चौड़ा काँटा उसके पैर में घुस गया। उसे कैसे निकाले? वह रोने लगा। इतनी देर में पहली बार उसे अपनी मम्मी की याद आई। मम्मी होती तो तुरंत सेफ्टी पिन से काँटा निकाल देतीं। बहुत बार जब वह स्कूल के मैदान से खेलकर लौटता था तो मम्मी पहले उसे चुप करातीं, फिर फटाफट काँटा निकाल देतीं।

लेकिन यहाँ मम्मी नहीं थी। उसे शेर ढूँढ़ना था, लेकिन शेर मिलेगा कहाँ? उसने बड़ की जड़ों से पूछना चाहा जिनमें वह अभी फँसा था। पर जड़ें हिलीं हवा से, जैसे कह रही हों—"हमें नहीं पता। हमें नहीं पता, हमें नहीं पता।"

तभी बड़ की शाखा से एक सेफ्टी पिन टपकी – "शेर बाद में ढूँढ़ना, पहले काँटा तो निकाल ले।"

पप्पू काँटा निकालने लगा कि पिन से आवाज मम्मी की तरह आई—"धीरे से बेटा, धीरे से।" काँटा निकालकर पप्पू ने पिन अपनी कमीज पर चिपका ली। फिर आगे चला। वहाँ उसे झाड़ी में घुसती एक सफेद बिल्ली दिखाई दी। बिल्ली पप्पू को देखकर रुक गई। वह पूँछ हिलाती पीली चमकीली आँखों से उसे देखने लगी।

पप्पू को पापा ने एक बार बताया था कि बिल्ली शेर की मौसी होती है।



"शेर की मौसी, शेर की मौसी! मुझे बताओ शेर कहाँ है? मुझे उसे ढूँढ़ना है।" कहता हुआ पप्पू बिल्ली की तरफ आगे बढ़ा।

उसे आता देख बिल्ली ने एक छलाँग लगाई और झाड़ियों में गायब हो गई। झाड़ियों में से एक चूहे के चिचियाने की आवाज आई, जरूर बिल्ली ने चूहे का शिकार किया था।

पप्पू ताज्जुब में था। शेर जंगल का राजा होता है। राजा का सब आदेश मानते हैं, मगर यहाँ तो अजीब हालत है। राजा के बारे में कोई बताने तक को तैयार नहीं है।

पप्पू को कोई और रास्ता नहीं सूझा तो उसने अपनी किताब पलटी—किताब से ही पता करे। वहाँ लिखा था—शेर एक गुफा में रहता था। ओफ-ओफ! यह भी कोई बात हुई? लेखक ने यह लिख तो दिया कि शेर गुफा में रहता था। मगर गुफा तक पहुँचने का रास्ता कहाँ है? अब इस किताब को पढ़कर कोई बच्चा शेर की गुफा तक पहुँचना चाहे तो कैसे पहुँचे? उसने किताब आगे पलटी। लिखा था कि शेर रात में पानी पीने नदी की तरफ जाता है।

"अच्छा तो मुझे रात होने से पहले नदी तक पहुँच जाना चाहिए। शेर जब पानी पीकर वापस जाएगा तो मैं पीछे-पीछे उसकी गुफा तक पहुँच जाऊँगा।" सोचकर पप्पू दौड़ चला।

रास्ते में उसे एक गधा मिला। गधा आराम से घास चर रहा था। और कान उठाकर इधर-उधर देखता जा रहा था, कहीं कोई खतरा तो नहीं? खतरा तो नहीं?

उसने पप्पू को दौड़ते देखा तो एक दुलत्ती झाड़ी और दौड़ चला। उसे लग रहा था कि शायद पप्पू उसी का पीछा करता आ रहा है। पप्पू ने उसे आवाज भी लगाई, मगर वह रुका नहीं।

पप्पू परेशान था—किसने कहा था कि किताब पर बैठकर जंगल में चला जाए! पापा ने किताब दी थी तो बैठकर आराम से उसे पढ़ता। कहानी खत्म हो जाती तो आराम से सो जाता या चैस, कैरम, लूडो खेलता। और कुछ नहीं तो टी.वी. देख लेता, या अपने दोस्तों के साथ पैलादुग्गो के मजे लेता। वह चैन से बैठने वाला नहीं था। मम्मी तो कभी-कभी प्यार से कहती भी थी कि पप्पू के पैर में चक्कर है, एक मिनट भी आराम से नहीं बैठता। और सचमुच किताब के मिलते ही वह आराम से नहीं बैठा था। वह



तुरत-फुरत उस शेर को ढूँढ़ने निकल पड़ा था जो किताब में बना था, जो एक गुफा में रहता था। शहरों में तो मकानों के नम्बर होते हैं। अब गाँवों में भी होने लगे हैं। लेकिन जंगल में रहने वाले शेर की गुफा का कोई नम्बर नहीं था, न ही पता-ठिकाना था।

जंगल में तो पहले ही अँधेरा था। यह जंगल भी कैसा होता है? कोई भी चीज कहीं भी निकल आती है! कहीं घास, कहीं ऊँचा पेड़ तो कहीं झाड़ी, कहीं लम्बा-चौड़ा मैदान। सारी की सारी चीजें बेतरतीब, लोगों ने इसीलिए तो जंगल नहीं काट डाले, जिससे कि वे अपने मन से चीजें उगा सकें। मगर अपने मन की चीजें भी हमेशा नहीं बनी रहतीं। पप्पू को एक बड़ी-सी चट्टान दिखाई दी। वह वहाँ बैठ गया। वह बहुत उदास था—क्या करे? उसी समय बिल्कुल उसके सामने एक लंगूर कूदा। काले मुँह वाला लंगूर उसके सामने आकर देखने लगा। बोला—"अरे बच्चे, अकेले इस जंगल में क्या कर रहे हो?"

"मुझे शेर ढूँढ़ना है।"

"शेर?" लंगूर हँसने लगा—"क्यों भई, तुम्हें शेर ढूँढ़ने की क्या जरूरत आ पड़ी? क्या शिकार करोगे?"

"शिकार?" पप्पू हँसने लगा—"नहीं-नहीं, मैं तो बस शेर को देखने आया था कि असली का शेर किताब-जैसा होता है या नहीं।"

"किताब में शेर? मुझे दिखाओ किताब का शेर। मैंने आज तक नहीं देखा। असली शेर तो मैंने बहुत देखे हैं। पहले इस जंगल में बहुत-से शेर थे।"

"तो अब तुम यहाँ बैठकर शेर के आने का इंतजार करोगे?" लंगूर ने पूछा।

"हाँ, मगर ... अगर शेर नहीं आया तो? क्या पता उसे आज प्यास न लगे?"

लंगूर ने पप्पू को ध्यान से देखा—"तुम सच कहते हो शेर नहीं आएगा। मगर इसलिए नहीं कि उसे प्यास नहीं लगी।"

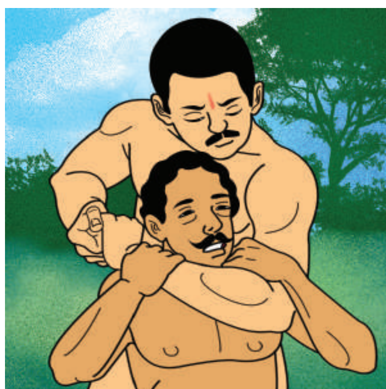
"तो फिर क्यों नहीं?"

"इसलिए कि इस जंगल में एक ही शेर बचा था। उसे भी चिड़ियाघर वाले पकड़कर ले गए।"

पप्पू के आँसू निकल आए। वह शेर को ढूँढ़ने जंगल में आया था और शेर चिड़ियाघर में था। उसकी कहानी की किताब खत्म हो गई थी।

(1992)





गाय ने पुकारा

किशनपुर के सरपंच का नाम रामपाल था। सुमेरपुर का सरपंच केशवचंद्र था। दोनों गहरे मित्र थे। अक्सर एक-दूसरे के गाँव आते-जाते रहते थे। एक दोपहर रामपाल केशव के घर पहुँचे। केशव ने उनका खूब स्वागत-सत्कार किया। खुशबूदार शर्बत पिलाया। मिठाई खिलाई।

फिर दोनों मित्र आपस में बातचीत करने लगे कि दरवाजे पर दस्तक हुई। केशव ने जोर से कहा – "अरे भाई, अंदर आ जाओ।"

बाहर खड़े व्यक्ति ने आवाज सुन ली। वह अंदर आया। उसने दोनों को नमस्कार किया और एक ओर खड़ा हो गया। उसका नाम रामकुमार था। वह एक नामी पहलवान था।

केशव के पूछने पर रामकुमार ने बताया कि उसे दूर किसी गाँव में कुश्ती लड़ने जाना है। शाम को पहुँचना जरूरी है। बैलगाड़ी का इंतजाम अब तक नहीं हो पाया।

यह सुनकर केशव ने कहा– "तो इसमें चिंता की क्या बात है? तुम मेरी बैलगाड़ी ले जाओ। तुम्हारा वहाँ समय पर पहुँचना जरूरी है। गाँव की इज्जत का सवाल है।"

केशव की बात सुनकर रामकुमार ने उसे धन्यवाद दिया। प्रणाम करके चला गया। उसके जाने के बाद केशव ने अपने मित्र रामपाल से कहा – "इस जैसा पहलवान आसपास के गाँव में तो क्या, दूर-दूर तक नहीं मिल सकता।"

यह बात सुनकर रामपाल को कुछ अच्छा नहीं लगा। केशव की बात में तो उनके गाँव की निंदा भी छिपी हुई थी। उस शाम वह चले तो आए, लेकिन कानों में केशव की

बात गूँजती रही। फिर मन ही मन यह भी सोचते रहे कि क्या सचमुच अब रामकुमार जैसा दूसरा कोई पहलवान पैदा नहीं हो सकता?

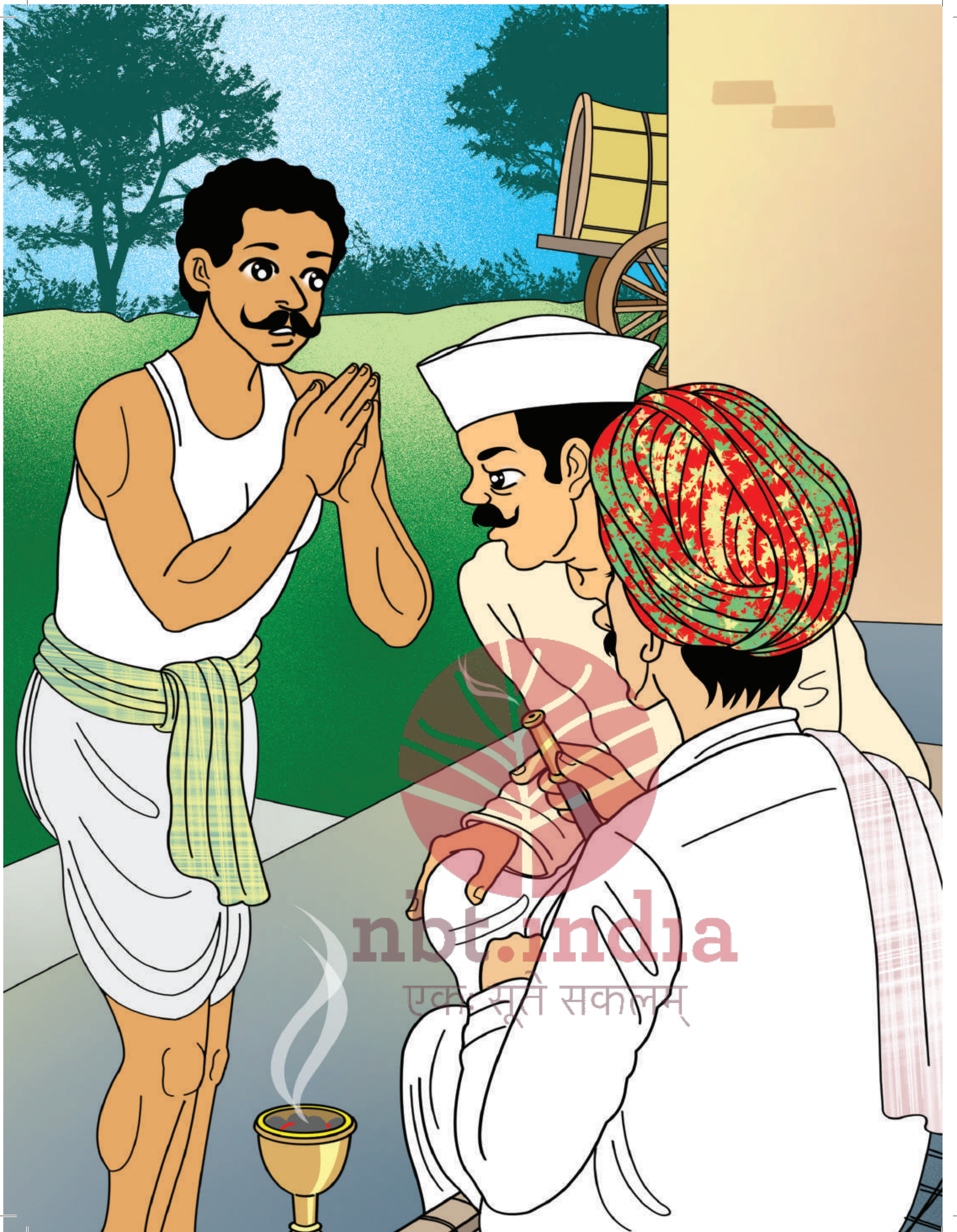
उसी दिन उन्होंने अपने गाँव किशनपुर में एक अखाड़ा खोलने का निश्चय किया। अच्छी मिट्टी का खेत चुनकर वहाँ अखाड़ा बना दिया गया। दूसरे किसी गाँव से कुश्ती के दाँव-पेंच सिखाने के लिए गुरु को भी बुलवाया गया। गाँव में ढोल पिटवाया गया। बच्चों और उनके माता-पिता को बताया गया कि इस अखाड़े में आने वाले बच्चों का खर्चा सरपंच जी उठाएँगे।

जल्दी ही वहाँ किशोर कुश्ती के अच्छे कारनामे दिखाने लगे। आसपास होने वाली कुश्तियों को जीतकर आने लगे। इनमें शिव नाम का लड़का तो हमेशा कुश्ती जीतकर ही आता। धीरे-धीरे ऐसा हुआ कि शिव ने जितनी भी कुश्तियाँ लड़ीं, सभी जीतीं। रामपाल को लगा कि उनका सपना बस पूरा होने को है।

उन्होंने अपने मित्र केशव को खबर भेजी। कहा कि वह किशनपुर में एक दंगल आयोजित करा रहे हैं। इसमें आसपास के गाँवों के पहलवान भाग लेंगे। वह भी अपने गाँव के रामकुमार को इस दंगल में भेजें। केशव को संदेश मिला, तो उन्हें बहुत खुशी हुई। उन्होंने रामकुमार को खबर करा दी। रामपाल से कहलवाया कि वह भी इस दंगल को देखने आएँगे। लेकिन संयोग की बात कि ऐन दंगल के दिन केशव बीमार पड़ गए और जा न सके।

उधर किशनपुर को खूब सजाया गया था। अखाड़े में तो रंग-बिरंगी झंडियाँ लगी थीं। कुश्ती देखने वालों की भीड़ जमा थी। आसपास के गाँवों से भी बहुत-से लोग वहाँ आ पहुँचे थे।

कुश्ती शुरू हुई, तो सामने बैठे रामपाल का कलेजा मुँह को आने लगा। रामकुमार शिव को खूब पछाड़ रहा था। लेकिन जल्दी ही शिव ने रामकुमार को नीचे पटका और उसे चित कर उसकी छाती पर चढ़ बैठा। रामपाल ने यह देखा, तो अपनी जगह से उठ खड़े हुए। लोग "वाह-वाह" कर रहे थे। रामपाल ने शिव की पीठ थपथपाई। कहा — "शाबास शिव, तुमने हमारे गाँव का नाम रोशन कर दिया। आज तुम हमसे कुछ भी माँग लो।"



यह सुन, शिव बोला – "मुझे कुछ नहीं, सिर्फ आपका आशीर्वाद चाहिए।"

मगर रामपाल ऐसे मानने वाले नहीं थे। उन्होंने बार-बार शिव से कहा तो वह बोला– "देना ही है कुछ, तो मुझे अपनी छोटी बछिया दे दीजिए।"

उसकी बात सुनकर रामपाल हँसने लगे। माँगनी थी तो गाय माँगते। कम-से-कम जी भरकर दूध तो पी लेते। बछिया का क्या करोगे?"

शिव के कहने पर कि वह छोटी-सी बछिया उसे बहुत अच्छी लगती है, रामपाल ने कहा – "ठीक है, शाम को आकर ले जाना।"

उधर रामकुमार भारी कदमों से गाँव की तरफ लौट रहा था। उसे सपने में भी उम्मीद नहीं थी कि शिव जैसा लड़का उसे हरा देगा। जीवन में पहली बार उसने इतनी करारी हार झेली थी।

उसी शाम को जब शिव रामपाल के यहाँ पहुँचा, तो वह उसका इंतजार कर रहे थे। उन्होंने बछिया की रस्सी शिव को थमाते हुए कहा – "लो शिव, संभालो इसे।" शिव ने बछिया की रस्सी पकड़ी और अपने घर ले आया। नाम रखा गुलाबो।

शिव गुलाबो की खूब सेवा करता। उसके लिए नरम घास लाता। दाना-पानी देता। जो कुछ खुद खाता, पहले उसका हिस्सा निकालता। उसके बैठने की जगह की सफाई करता। जल्दी ही गुलाबो उसे खूब पहचानने लगी। उसकी आवाज सुनकर वह उसे रंभा-रंभाकर बुलाने लगती। वह पास आता, तो अपने माथे को उसके शरीर से रगड़ती। जैसे कहना चाहती हो – "इतनी देर से क्यों आए?" उसका हाथ चाटती। धीरे-धीरे वह बड़ी होने लगी।

शिव भी जहाँ जाता, उसे अपने संग ले जाता। आसपास के गाँवों में यह बात फैलने लगी थी कि शिव की गाय उसके लिए बहुत भाग्यशाली है। वह जहाँ भी उसे साथ ले जाता है, कुश्ती जीतकर आता है।

सिर्फ कुश्तियों में ही क्यों, शिव गुलाबो को आसपास लगने वाले पशु मेलों में भी ले जाने लगा। गुलाबो इतनी सुंदर और प्यारी गाय थी कि जहाँ भी जाती, इनाम जीतकर आती। उसके गले में घंटी पड़ी रहती। मोटे मोतियों की माला पहनाई जाती। सींगों पर रेशमी रिबनों के बने फूल बाँधे जाते। चलती तो गायों की महारानी से कम न लगती।

एक दिन शिव को किसी जरूरी काम से कहीं जाना था। वह गुलाबो के दाना-पानी का प्रबंध करके चला गया। अपने माता-पिता से कह गया कि वे गुलाबो का ध्यान रखें। शिव उस शाम नहीं लौट सका। अगले दिन जब आया, तो घर में कोहराम मचा हुआ था। रात में गुलाबों को कोई खूँटे से खोल ले गया था।

शिव परेशान हो उठा। कई दिन बीत गए। इस दौरान शिव ने ठीक से खाया-पिया नहीं। उसका किसी काम में मन न लगता।

एक दिन शिव को सरपंच रामपाल ने बुलाया। शिव वहाँ पहुँचा। उसका उदास चेहरा देखकर रामपाल ने कहा – "मुझे पता है शिव, गुलाबो को कोई चुरा ले गया है। लेकिन यदि वह नहीं मिली, तो हम तुम्हें दूसरी गाय दे देंगे।"

रामपाल की बात सुनकर शिव कुछ न बोला। वह तो मन ही मन तय कर चुका था कि यदि गुलाबो नहीं मिली, तो वह दूसरी गाय नहीं पालेगा।

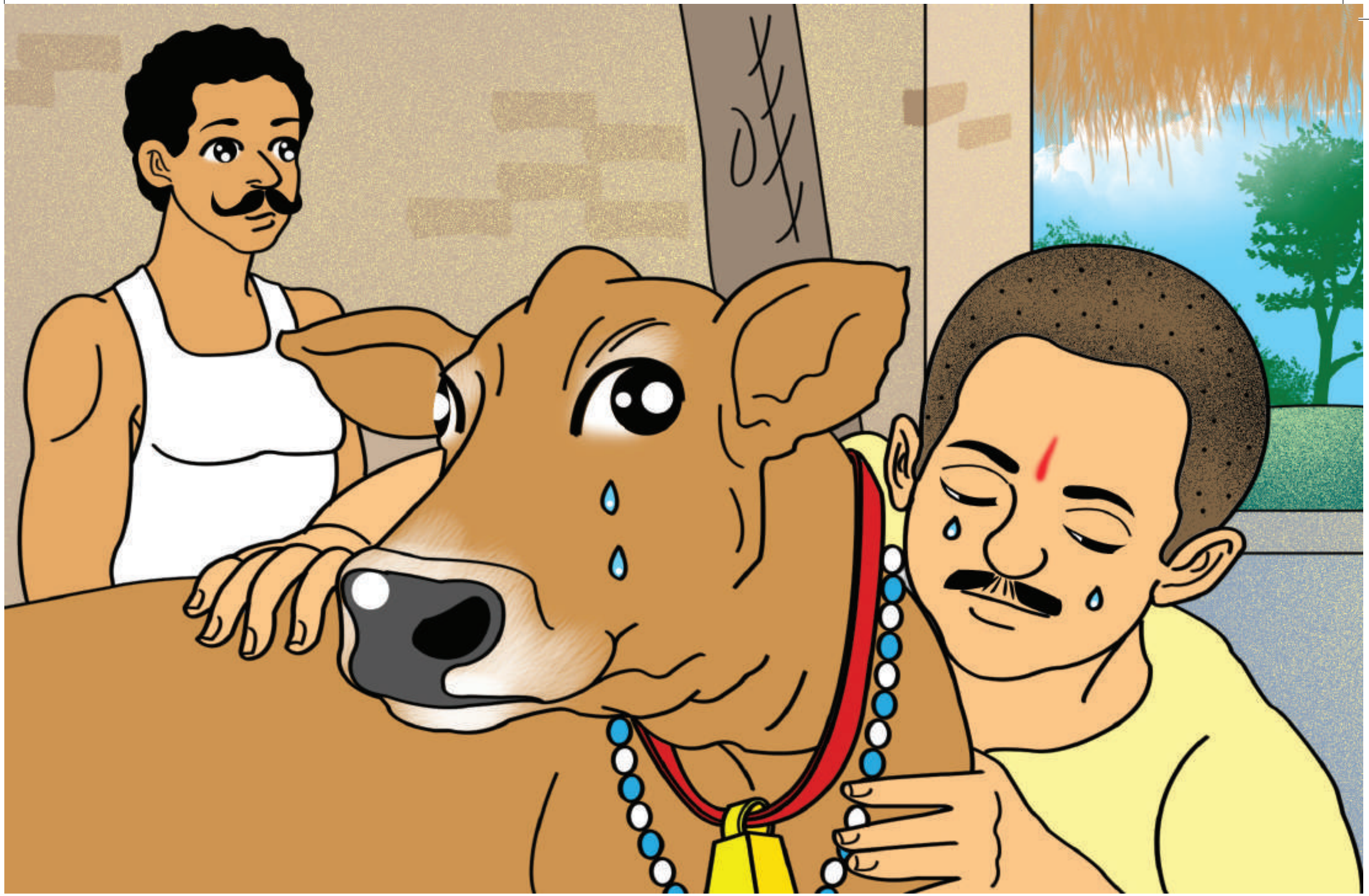
तभी रामपाल ने कहा– "दरअसल शिव मैंने तुम्हें जरूरी काम से बुलाया है। तुम्हें सुमेरपुर जाना होगा। वहाँ मेरे मित्र केशव रहते हैं। बहुत समय से बीमार हैं। उनके लिए मैंने एक मशहूर वैद्य से दवा मँगाई है। तुम इसे जाकर दे आओ।"

काम ऐसा था कि शिव फौरन तैयार हो गया। सुमेरपुर पहुँचते-पहुँचते शाम हो गई।

केशवचंद्र के घर पहुँचकर उसने उन्हें दवा दी। रामपाल का संदेश दिया कि जल्दी ही वह उनसे मिलने आएँगे। केशवचंद्र उसे देखकर बहुत खुश हुए। बोले – "पहले तो इस इलाके में एक ही नामी पहलवान था, रामकुमार। अब तुम भी हो, यह जानकर अच्छा लगता है।"

शिव लौटने लगा, तो उसे एक घर के दरवाजे के सामने रामकुमार खड़ा दिखाई दिया। वह उसी का घर था।

रामकुमार शिव के पास आ उसका हालचाल पूछने लगा। दोनों जोर-जोर से बातें करने लगे। तभी शिव को गाय के रंभाने की आवाज सुनाई दी। वह सोचने लगा कि यह तो गुलाबो की आवाज है। लेकिन हो सकता है कि उसके मन का वहम ही हो। गाय फिर रंभाई। अब शिव को पूरा विश्वास हो गया कि गुलाबो आसपास ही कहीं है। वह बिना सोचे-समझे उधर दौड़ पड़ा, जिधर से आवाज आई थी। रामकुमार के घर की



सबसे अंदर वाली कोठरी में गुलाबो बँधी थी। उसने शिव की आवाज को पहचान लिया था। शिव उसके गले से लिपट गया, तो गुलाबो उसे चाटने लगी।

दूर खड़ा रामकुमार यह देख रहा था। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। बोला – "माफ करना शिव। मेरे मन में पाप आ गया था। सोचता था कि जब तक यह गाय तुम्हारे साथ रहेगी, तब तक कभी तुम्हें नहीं हरा सकूँगा। इसीलिए मैं इसे चुरा लाया। मगर जब से यह यहाँ आई है, इसने चारे को मुँह नहीं लगाया। आज तुम्हें यहाँ देखकर मैं चौंका जरूर था कि तुम यहाँ कैसे? लेकिन फिर मैंने सोचा कि तुम्हें पता कैसे चलेगा कि गाय कहाँ है। मगर तुम्हारी आवाज सुनकर यह तुम्हें पुकारने लगेगी, इसका तो मुझे अंदाजा तक नहीं था। ले जाओ भाई अपनी गाय और मुझे भी माफ कर देना।"– कहता हुआ रामकुमार वहाँ से चला गया।

(1997)



पेड़ पर स्कूल

उम्र थी उसकी सात साल। घुंघराले बाल, काली आँखों और चमकीले दाँतों वाली वह बच्ची बातचीत में सभी का दिल जीत लेती थी। नाम था मीनू।

छुट्टियों के दिन थे। इन दिनों बच्ची को ढेर-से काम मिल गए थे। सचमुच ही ढेर-से। जैसे कि जब मन आ जाए, माँ की सारी साड़ियों को बाहर निकालकर पहन-पहनकर देखना होता। उनके पर्दे बनाने होते। उन्हें झंडों की तरह लहराना होता। ऐसे में यदि माँ की साड़ियाँ खराब होतीं या उनकी तह बिगड़ जाती, तो वह बेचारी नन्ही बच्ची क्या कर सकती थी। उसके तो छोटे-छोटे हाथ-पाँव ठहरे। वह इतनी बड़ी-बड़ी साड़ियों को ठीक से कैसे रखती? जब माँ साड़ी खराब करने के लिए उसे डाँटती थी, तो आखिर यह क्यों नहीं सोचती थी कि वह बेचारी अपनी नन्ही -नन्ही अँगुलियों से उन बड़ी-बड़ी साड़ियों की तह कैसे बनाती। यह सुनकर माँ और भी नाराज हो जाती। वह कहती, "तू उन साड़ियों को छूती ही क्यों है?" लेकिन बच्ची माँ को समझाती भी कैसे कि उन रंग-बिरंगी साड़ियों को लहराकर वह उस बंद कमरे में रंग-बिरंगे फूल खिलाती थी। झरने बहाती थी। चिड़ियों को बुलाती थी। पेड़ों पर झूले डालती थी। माँ-पापा जब तक काम से लौटते, उसे ऐसा ही करना होता था। फिर और भी ढेर-से काम होते थे, जिन्हें वह खोज-खोजकर जुटा लेती। जैसे गुड़िया की चाय के सेट की सफाई। बर्तनों की मँजाई। गुड़िया के रजाई-गद्दों को धूप में डालना। फटे कपड़े सिलना। गुड़ियाघर को सजाना .... और भी न जाने क्या-क्या।



एक दिन दरवाजे की घंटी बजी। मीनू दौड़ी-दौड़ी गई। उसने दरवाजा खोला। सामने मम्मी की सबसे प्यारी सहेली दीपा मौसी खड़ी थीं। मीनू "मौसी-मौसी" कहकर उनसे लिपट गई। दीपा मौसी और मम्मी बैठकर बातें करने लगीं। अब मीनू का भी तो मन कर रहा था कि वह दीपा मौसी से ढेर सारी बातें करे। वह कभी चाय लाने के बहाने, कभी पानी देने के बहाने, कभी अपनी गुड़िया दिखाने के, तो कभी होमवर्क पूछने वहाँ आती रही। उसकी बात सुनने के चक्कर में बार-बार मम्मी की बात अधूरी रह जाती। अंत में खीझकर उन्होंने उसे डाँटा– "मीनू, आज तो बस तुम बहुत ही तंग कर रही हो। हमें बात क्यों नहीं करने देतीं।"

मीनू की आँखों में आँसू भर आए – "मम्मी खुद तो मुझसे बात करती नहीं हैं। दीपा मौसी को भी बात नहीं करने दे रही हैं।"

दीपा मौसी जैसे उसका उदास चेहरा देखकर उसके मन की बात समझ गई। मम्मी से बोलीं – "उषा तुम चुप रहो। अब मैं अपनी प्यारी बिटिया मीनू से बात करूँगी। आओ मीनू, पास आकर मेरी गोद में बैठो।" इस डर से कि मम्मी नाराज न हो जाएँ, वह ठिठकी। लेकिन मौसी ने जब बार-बार पास बुलाया, तो वह उनकी गोद में जा बैठी।

मौसी ने पूछा, "अच्छा बताओ मीनू, इस बार तुम कौन-सी क्लास में आ गई।"

"चौथी" 'ए'।" मीनू ने जवाब दिया। उसकी बात सुनकर मौसी मुस्कुराती हुई बोली, "अच्छा भई चौथी तो सुना है, मगर यह चौथी "ए" क्या होता है? यह कौन-सी क्लास है।"

मौसी की बात सुनकर मम्मी भी मुस्कुराईं। लेकिन मीनू की समझ में यह नहीं आया कि वह इतनी बड़ी मौसी को कैसे बताए कि चौथी "ए" क्या होती है।

वह बोली, "ओफ, ओह मौसी! आपको इतना भी नहीं पता सेक्शन होता है।"

"सेक्शन माने क्या?" मौसी फिर बोलीं।

"सेक्शन!" बड़ी मुसीबत है। मीनू को ताज्जुब हुआ। मौसी इतनी बड़ी हो गईं, मगर उन्हें सेक्शन नहीं पता। पूछ रही हैं "सेक्शन क्या?"

"सेक्शन माने ...." कैसे समझाए मीनू, "... मौसी ए बी सी डी।" मीनू बोली।

"ए बी सी डी, यानी कि एक-दो तीन-चार" मौसी ने अपनी हथेली को फैलाते हुए कहा।



"हाँ, हाँ, हाँ, एक-दो तीन-चार।" मीनू ताली बजाती बोली। वह जोर-जोर से हँस रही थी।

"इसका मतलब हुआ कि एक-दो -तीन-चार मंजिलें। कितनी मंजिलें हैं तुम्हारे स्कूल में।" मौसी ने पूछा।

"ओफ, ओह मौसी! मंजिलें तो दो ही हैं। मगर वहाँ कमरे अलग-अलग हैं।" मीनू ने कहा।

"तो क्या मीनू तुम कमरे में बैठकर पढ़ती हो।" मौसी ने पूछा।

मीनू सोच में पड़ गई कि मौसी को आखिर हो क्या गया है? फिर बोली – "क्यों मौसी, क्या आप कमरे में नहीं पढ़ती थीं?"

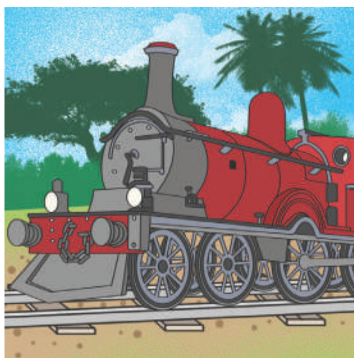
"नहीं, मैं तो पेड़ पर बैठकर पढ़ती थी।" मौसी बोलीं।

"पेड़ पर कैसे भला।" उसे आश्चर्य हुआ।

"ऐसे कि नीचे मास्टर जी होते थे। ऊपर मैं बैठी होती थी। बस, जो काम किया स्लेट को रस्सी में बाँधकर नीचे लटका दिया। मास्टर जी ने उसे देखा, फिर ऊपर खींच लिया। अब मास्टर जी पेड़ पर तो चढ़ नहीं सकते थे, इसलिए गलती भी करती, तो सजा न मिलती।"

मीनू की आँखें फटी रह गईं। यह कैसा स्कूल था कि तभी मम्मी बोली– "बस, बस दीपा। खूब बुद्धू बना लिया लड़की को।" और जोर से हँसने लगी। मौसी भी हँसी। अब मीनू को समझ में आया कि मौसी मजाक कर रही थीं। उसकी सारी उदासी दूर हो गई और वह भी जोर से हँसने लगी।

(1998)



इंजन चले साथ-साथ

सड़-सड़ की आवाज से रजनी की आँख खुली। उसने देखा माँ चलानी में दही बिलो रही थी। फिर उसने बिल्कुल अपने सिर पर नीम की पत्तियों को हौले-हौले हिलते देखा और एकाएक उठकर बैठ गई। सोमेश अपनी खाट पर नहीं था, कहाँ गया होगा?

जरूर वह गुमटी के पास बैठा हौद में उछलते-कूदते मेढकों को देख रहा होगा या पत्थरों को भिड़ाकर आग निकाल रहा होगा या पोखर से सिंघाड़े तोड़ रहा होगा। अथवा अमिया बीन रहा होगा।

"गंदा कहीं का जान-बूझकर मुझे छोड़ जाता है। हर जगह अकेला चला जाता है।" रजनी को उठा माँ बोली—"रजनी जल्दी उठकर दातुन कुल्ला कर ले। देख कैसी अच्छी लोनी (मक्खन) निकली है।"

"अच्छा माँ!" उसने कह तो दिया, पर दिमाग सोमेश पर नजर रखे था। उसे ढूँढ़ रहा था। वह कहाँ है?

"अरे, तू सुनती नहीं। बाबूजी का गोदाम से आने का टाइम हो गया।" माँ ने दोबारा टोका तो वह ऐंड़ती-उड़ती उठी और तिखाल से मंजन की शीशी उठाकर मंजन निकाल लाई। तभी उसे लगा जैसे खिड़की से कोई झाँक रहा था। वह दौड़ती हुई खिड़की के पास गई कि धीरे से आवाज आई—"रजनी!" उसने जोर से पुकारना चाहा तो श....श....माँ कहाँ?

"वहीं।"

"तो तू जल्दी दरवाजे पर आ।" रजनी मंजन-वंजन करना भूल दरवाजे पर पहुँची।

"देख।" कहते हुए सोमेश ने अपनी मुड़ी हुई कमीज में कुछ देखने को कहा। मगर उसे कुछ दिखाई नहीं दिया।

"मुझे तो कुछ नहीं दिखता!"

"ध्यान से देख।"

रजनी ने फिर देखा। थोड़ी झुकी। उसे गुलाबी रंग के दो तिनके नजर आए! "क्या है?"

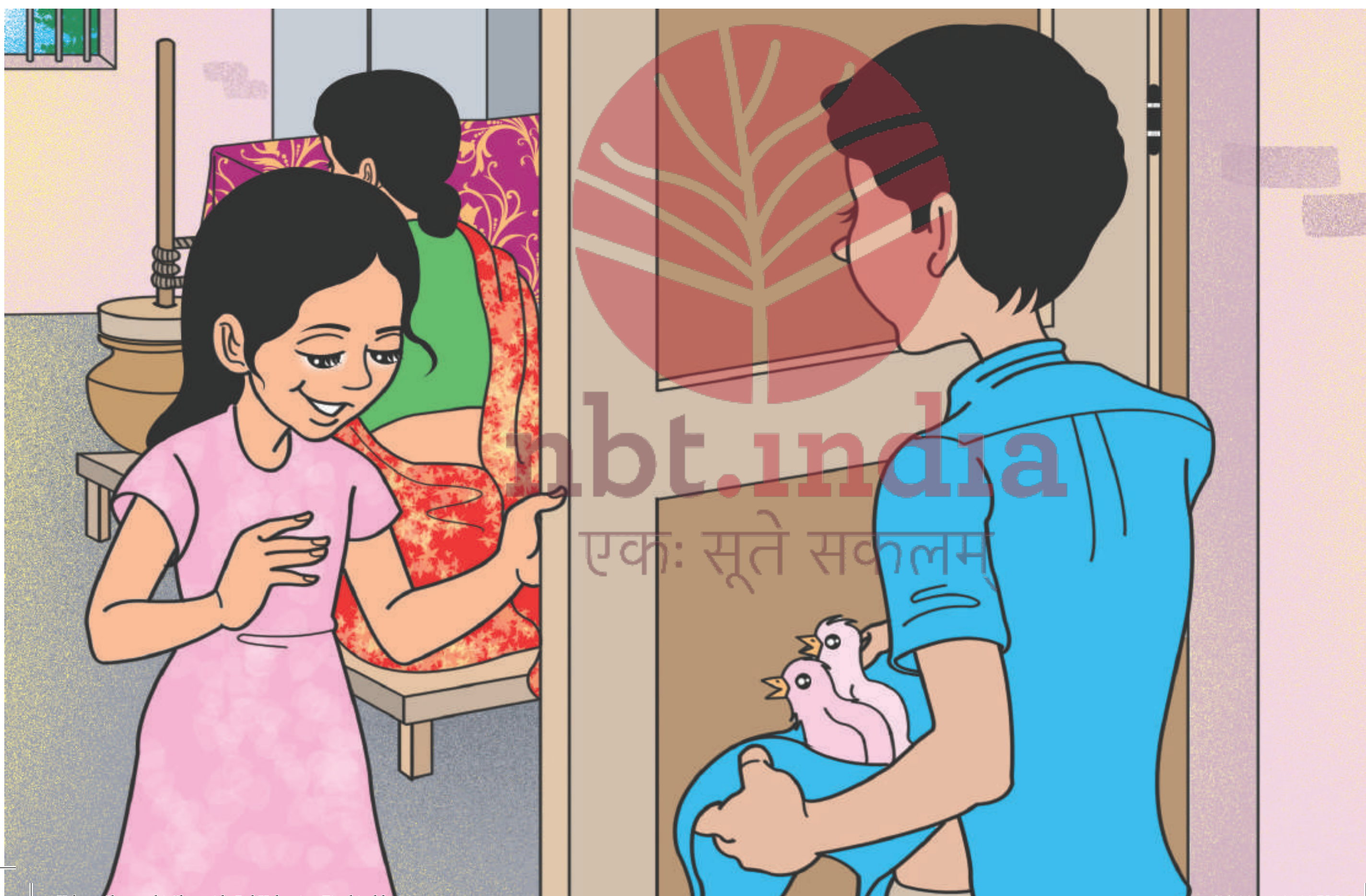
सोमेश ने कमीज को थोड़ा-सा खोला तो रजनी की हलकी-सी चीख निकल आई। वे चिड़िया के दो छोटे-छोटे बच्चे थे।

"कहाँ मिले!"

"पेड़ के नीचे। पूरा घोंसला नीचे पड़ा था। मैं पहुँच गया, नहीं तो बिल्ली खा जाती या कौआ ले जाता। इन्हें माँ से छिपाकर रखना है।"

"छिपाकर क्यों रखें? माँ को सारी बात बता क्यों न दें!" रजनी ने पूछा।

"डाँट नहीं पड़ेगी। माँ कहती हैं पढ़ते-लिखते कुछ हैं नहीं, बस उल्टे सीधे कामों में लगे रहते हैं।" सोमेश बोला।



अभी वे दोनों बात कर रहे थे कि अचानक माँ आ पहुँची। "रजनी ने मंजन कर लिया और सोमेश तू सुबह-सुबह कहाँ चला गया था। ये कमीज में क्या छिपा रखा है?"

सोमेश जो बात माँ से छिपाकर रखना चाहता था वह उसे इतनी जल्दी पता चल गई।

बच्चों को देखते ही माँ के चेहरे पर अजीब-सी रेखाएँ उभर आईं—

"कहाँ से ले आया इन्हें! चल दूर हटा, मर गए तो पाप और लगेगा।"

"मगर माँ अगर फेंक दूँ तो जरूर मर जाएँगे।" सोमेश ने मुस्कराकर कहा।

माँ डाँटना चाहती थीं, मगर डाँट नहीं पाई। चिड़िया के इन नन्हे बच्चों पर उसे दया आ गई।

टूटी हुई संदूकची में सोमेश ने इन दोनों बच्चों का घर बना दिया। वे वहीं बैठे रहते या संदूकची के किनारों पर बैठ जाते। छोटे होने के कारण दूर तक नहीं उड़ सकते थे, बल्कि वे ठीक से दाना भी नहीं चुग पाते थे।

गर्मियों की छुट्टियों में रजनी और सोमेश को खूब मजे आते। माँ दिनभर काम में जुटी रहती। बाबूजी गोदाम से आकर दोपहर में सो जाते।

और ये दोनों माँ की आँख बचाकर दूर-दूर तक सैर करते। घर के पास आम का बाग था। माली की नजर छिपाकर उसमें घुस जाते और आम तोड़ते। उड़ती तितलियों को पकड़ने की कोशिश करते। मधुमक्खियों के पीछे जाकर देखते कि फूल का रस कैसे चूसती हैं। कोयल की बोली निकालते। मन करता तो गाना भी गाते।

एक दिन घूमते-घूमते वे दोनों रेलवे स्टेशन के दूसरे छोर पर चले गए। यहाँ रेल की पटरियाँ बंद हो जाती थीं। पटरियों के बाद एक दीवार थी। दीवार से सटी सड़क थी और शहर शुरू हो जाता था। जहाँ पटरियाँ बंद होती थीं, वहाँ एक इंजन खड़ा था।

ऐसा लगता था कि इंजन वहाँ बहुत दिनों से खड़ा है। पहले तो सोमेश और रजनी ठिठके। मगर एकाएक सोमेश ने हाथ बढ़ाया। डंडे को पकड़ सीढ़ी चढ़ता वह इंजन के अंदर घुस गया। पीछे-पीछे रजनी भी आई। वहाँ खूब धूल-मिट्टी जमा थी। इंजन की भट्टी जो कभी आग उगलती होगी, अब शांत थी। ऐसा लगता था कि कोई गुफा अँधेरे में मुँह बाए खड़ी हो। सोमेश ड्राइवर की सीट पर बैठ गया। उसने लीवर खींचना चाहा तो रजनी चिल्लाई—"रहने दो, रहने दो, कहीं चल पड़ा तो!"

उसकी बात सुनकर सोमेश हँसने लगा—"अरे पागल, जब तक कोयला न डालो तब तक इंजन चल नहीं सकता। जैसे हम खाना खाते हैं, इंजन का खाना कोयला है। यह खाना भी खाता है, पानी भी पीता है।"

"यह चलता भी है?" रजनी ने इंजन के अंदर लगी जंग को देखकर कहा।

"शायद बहुत दिनों से नहीं चला। चलो बाबूजी से पूछते हैं इसके बारे में।"

घर जाकर सोमेश और रजनी ने देखा, बाबूजी खाना खा रहे थे। जब उन्होंने इंजन के बारे में पूछा तो वह बोले—"शायद कोई एक्सीडेंट हो गया था तभी से यहाँ खड़ा है। लेकिन तुम लोग वहाँ क्या करने गए थे? कोई साँप, कातर-बिच्छू निकले तो..."

बेचारे बच्चों की जान निकल गई। सोचकर तो आए थे कि बाबूजी से कोई अच्छी-सी कहानी सुनने को मिलेगी! मगर डाँट और पड़ गई। पूरी दोपहर और शाम बच्चे इसी उधेड़बुन में लगे रहे। जितना इंजन को भूलना चाहते वह सामने आ खड़ा होता, अपने कानों को हिला-हिलाकर बुलाता। कभी कमर मटका-मटका कर नाचता, कभी सर से पानी का मोटा फव्वारा छोड़ता, तो कभी दोनों आँखों से तेज जादुई रोशनी फेंकता ..... इंजन था या कोई जादूगर।

सोमेश सपने में इंजन पर सवारी गाँठता। पटरियों पर कभी इंजन बैलगाड़ी बन जाता, तो कभी हवाई जहाज। यही नहीं, नदी में वह नाव बनकर तैरता। पगडंडियों के बीच गाय-बकरियों के पीछे दौड़ छुआ-छुई खेलता। और तो और पेड़ पर चढ़कर सोमेश के लिए अमिया भी तोड़ लाता।

एक सुबह सोमेश को पता चला कि बाबूजी को दौरे पर जाना है। वापस लौटने में दो-तीन दिन लग जाएँगे। बस फिर क्या था। सोमेश और रजनी ने इंजन की ओर कूच करने की योजना बनाई।

"लेकिन माँ से क्या कहें?" रजनी ने पूछा। "कह देंगे एक दोस्त का जन्मदिन है बस।" सोमेश ने सुझाया।

"लेकिन क्या माँ से झूठ बोलना ठीक है!" "फिर क्या करें। माँ को पता चला तो वह बिलकुल नहीं जाने देंगी।"

वे दोनों सोच में डूब गए। क्या करें कि माँ से झूठ भी न बोलना पड़े और इंजन तक जाने का मौका मिल जाए। तभी माँ की आवाज आई। वह बाजार जा रही थीं।

सोमेश और रजनी से कह रही थीं कि घर में ताला लगाकर जा रही हैं। वे दोनों बाहर ही खेलते रहें।

माँ जैसे ही आँखों से ओझल हुई वे दोनों दौड़ पड़े इंजन की तरफ। रास्ते में नीरज और बंटू भी मिल गए। उनको पता चला तो वे भी साथ हो लिए।

चारों बच्चों ने तय किया कि खेलने से पहले इंजन की सफाई की जाए।

बस फिर क्या था, पास पड़ी कमचियों की झाड़ू बनाई गई। इंजन के अंदर पड़ा पुराना बोरा पोछा गया। कुछ घंटों में इंजन चमचमाने लगा और चारों बच्चे भूत नजर आने लगे।

"अब घर जाएँगे तो खूब डाँट पड़ेगी।" रजनी बोली।

"कोई बात नहीं। माँ समझेंगी हम खूब मिट्टी में खेले हैं।"

बंटू और नीरज अपने-अपने घर चले गए। सोमेश और रजनी की भूतिया सूरत देखी तो माँ गुस्से से लाल-पीली हो गई। लेकिन बच्चों ने नहीं बताया कि वे इतने गंदे कैसे हो गए?

चिड़िया के बच्चे तो कब के उड़ चुके थे। टूटी संदूकची खाली पड़ी थी। सोमेश ने उसमें मिट्टी भर कर गेंदे के बीज बो दिए थे। कुछ ही दिनों में संदूकची में छोटे-छोटे पौधे उग आए। रजनी पौधों में नियमित पानी देती। उन्हें उस दिन का इंतजार था, जब उन पौधों पर सुंदर-सुंदर फूल खिलेंगे। रात के समय माँ लेटीं तो सोमेश उनके पाँव दबाने लगा। रजनी पीछे क्यों रहती, वह उनका सिर दबाने लगी।

"ओह, मेरे सिर या पैर में दर्द नहीं हो रहा है, तुम लोग यह क्या कर रहे हो?" फिर भी बच्चे न माने।

सोमेश ने बात छेड़ी – "माँ आपको पता है रेलवे स्टेशन के किनारे एक पुराना इंजन खड़ा है?"

"हाँ देखा तो है। बाबूजी बड़ी मजेदार कहानी सुनाते हैं इसके बारे में।"

"सुनाओ न माँ!"

"अब इस वक्त पूरे दिन की थकी हूँ। फिर तुम लोग ऊँघ भी तो रहे हो!" माँ ने दोनों बच्चों को हलके से झिड़का।

"सुना भी दो न माँ!" सोमेश ने प्रार्थना की।

"कोई खास बात नहीं है। बाबूजी कहते हैं कि कुछ वर्ष पहले सड़क के पार धर्मशाला में एक पंडितजी रहते थे। एक बार किसी ज्योतिषी ने उन्हें बताया कि रेलगाड़ी यात्रा उनके लिए खतरनाक है। बस पंडितजी ने उसी दिन से रेल से आना-जाना छोड़ दिया। जाते थे पर पैदल, इक्के-ताँगे, साइकिल, रिक्शा, बस से। मगर रेलगाड़ी में न चढ़ने की कसम खा ली थी। धीरे-धीरे समय बीता। गर्मी की एक रात पंडितजी छत पर सो रहे थे। तभी इन पटरियों पर इंजन दौड़ता चला आया। दरअसल इंजन में कोई ड्राइवर नहीं था। वह तो अपने आप चल रहा था। इंजन दीवार तोड़ता हुआ धर्मशाला के अंदर घुस गया। किस्मत की बात, इंजन के झटके से धर्मशाला ढह गई और पंडितजी उसके मलबे के नीचे दब गए। बाबूजी कहते हैं यह वही इंजन है!"

दोनों बच्चों को मन ही मन डर-सा लगा। इंजन को लेकर तो वे न जाने कहाँ के कुलाबे भिड़ा रहे थे। उन्हें वह भूत की तरह लगा। काला भूत जो चाहे जब पटरियों पर भाग सकता था। अपने पहियों तले कुचल सकता था। दोनों ने आँखों ही आँखों में फैसला कर लिया था कि अब वे भूलकर भी इंजन की तरफ नहीं जाएँगे।

अगले दिन जब नीरज और बंटू खेलने भी आए तो सोमेश और रजनी ने भूल से भी इंजन की ओर जाने की बात नहीं उठाई। वे मिलकर कनेर के झुरमुट में खेलते रहे।

वहाँ एक छोटा-सा मंदिर था। झकाझक सफेद। पता नहीं किसने सफेद पुताई की थी, जिसमें कोई मूर्ति भी नहीं थी। उन्होंने कनेर के फूलों की बहुत-सी मालाएँ मंदिर के चारों ओर लटका दीं। पास में ही बहुत-सी पीपरपनी की कतरनें पड़ी हुई थीं। बच्चों ने पानी की मदद से उन्हें भी चिपकाना चाहा, पर पानी से भला वे कैसे चिपकतीं। छोटे-छोटे गड्ढे खोदकर उन्होंने किसी में कमल खिले होने की कल्पना की। किसी की कल्पना की मछलियाँ तैरीं। मल्लाहों ने नाव खेई। तट से पार उतारा। सूरज जब खूब सिर पर चढ़ आया और कनेर के कोमल पत्तियों की छत ने धूप रोकने में आनाकानी की, तो बच्चे अपने-अपने घर लौट आए।

पर मन में कहीं कसक बाकी थी कि आज इंजन की तरफ नहीं जा सके।

दोनों ने सोचा कि वे क्यों न इस बारे में बाबूजी से पूछें। बाबूजी लौटे तो बच्चों ने सबसे पहला सवाल उनसे यही किया। वह हँसे। कहने लगे – "देखो बहुत सालों से यह इंजन यहीं खड़ा है। ऐसी कई कहानियाँ कही जाती हैं इसके बारे में। वैसे वह धर्मशाला तो सही-सलामत है। चाहो तो तुम भी देख सकते हो!"

बच्चों का विश्वास बढ़ा – यानी कि इंजन उतने डरने की चीज नहीं है। जाया जा सकता है वहाँ।

दूसरे दिन जब सोमेश और रजनी जाने लगे तो बाबूजी से उन्हें खूब डाँट पड़ी। बाबूजी बोले – "मैंने सुना है तुम लोग पूरे दिन इधर-उधर घूमते रहते हो। पढ़ते-लिखते बिलकुल नहीं। छुट्टियों का यह मतलब तो नहीं है कि दिनभर टल्लेवीसी करो।"

सोमेश और रजनी के पसीने छूट गए। बाबूजी जब डाँटते हैं तो बस ...

थोड़ी देर बाद बाबूजी गोदाम चले गए तो दोनों बच्चों ने अनुमान लगाया जरूर माँ ने ही उनकी शिकायत की होगी।

उस दिन वे दिनभर पढ़ते रहे। माँ जब सो गईं तो खूब जोर-जोर से पढ़ने लगे, जिससे कि माँ यह न कहे कि जब सो गई थीं तो उन्होंने पढ़ना बंद कर दिया।

दूसरे दिन जब सुबह से ही उन्होंने किताब उठा ली तो बाबूजी को उन पर दया आ गई।

बोले – "मैंने यह कब कहा था कि दिनभर तोते की तरह रटते रहो। अरे चाहे कम पढ़ो, मगर मन लगाकर पढ़ो। अब जाओ खेलो।"

माँ उन्हें नाश्ता करने के लिए टोकती रह गईं, पर वे कहाँ रुकने वाले थे। सीधे दौड़े तो इंजन के पास पहुँचे।

उन्हें लगा जैसे इंजन उन्हीं का इंतजार कर रहा था। उन्हें बुला रहा था। उनके न आने की शिकायतें करता आँसू बहा रहा था।

"भइया पंद्रह अगस्त आने वाला है। क्यों न हम इसे सजाएँ उस दिन।"

बात ठीक थी, पंद्रह अगस्त को पूरे रेलवे स्टेशन को खूब सजाया जाता था। इंजनों पर झंडियाँ लगी रहती थीं। लड्डू बाँटे जाते थे।

जैसे-तैसे पंद्रह अगस्त के इंतजार में बच्चों के दिन बीते। स्कूल से लौटते हुए भी वे इस बारे में बातचीत करते। एक शाम सोमेश और रजनी ने पूरे मोहल्ले के बच्चे जमा किए। आपस में बातचीत की कि क्यों न बच्चे अपना पंद्रह अगस्त अपनी तरह से मनाएँ।

सब बच्चों को यह खूब अच्छा लगा। बंटू को तरह-तरह के चित्र बनाने का शौक था। वह घर से रंग ले आया। इंजन के चारों तरफ फूल-पत्ती, चिड़िया, पहाड़, नदी बना दी गई। जिसके घर में जो भी फूल लगे थे, तोड़ लाए गए। आम के पत्तों से बंदनवार बनाए गए। इंजन के सामने वाले हिस्से में सेहरे की तरह फूलमालाएँ लटकाई गईं। वह सचमुच किसी दूल्हे की तरह सजा-धजा था।

लाइन के किनारे पड़े नुकीले पत्थरों को जोड़ तरह-तरह की आकृतियाँ बनाई गई थीं। इंजन के दरवाजों पर लगे आम के बंदनवार दूर तक आने-जाने वालों का स्वागत करते उन्हें बुला रहे थे।

तभी किसी ने शुरू किया, "मेरा प्यारा हिन्दुस्तान"

दूसरों ने सुर मिलाया, "देश हमारा हिन्दुस्तान जग से न्यारा हिन्दुस्तान!"

मिले-जुले सुर ने ऐसा समाँ बाँधा कि दूर प्लेटफॉर्म पर गाड़ियों का इंतजार करने वाले भी सिर उचका-उचका कर देखने लगे। तभी स्टेशन मास्टर चाचा, गार्ड अंकल और बाबूजी के अन्य साथी वहाँ आ पहुँचे।

बच्चे जैसे पहले से तैयार थे। जैसे ही वे लोग आए, उन पर फूल बरसाकर स्वागत किया गया। स्टेशन मास्टर चाचा तथा उनके दूसरे साथियों ने इंजन को घूम-घूमकर चारों तरफ से देखा फिर बोले, "वाह बच्चो इस कबाड़ा इंजन को इतना अच्छा रूप बस तुम ही दे सकते थे। आज से यह इंजन तुम्हारा हुआ। जितना चाहो यहाँ खेलो।"

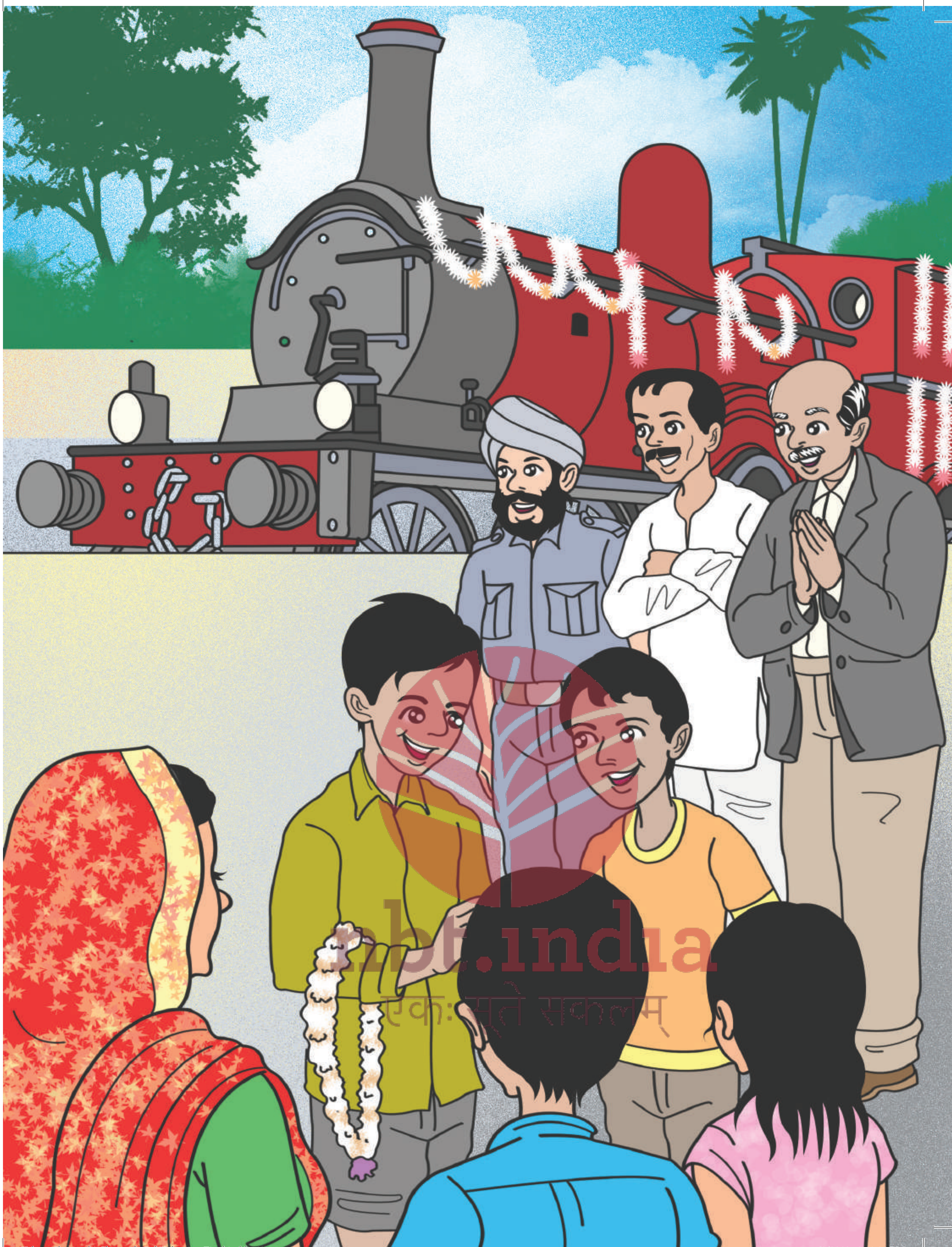
सारे बच्चे तालियाँ बजाने लगे।

तभी सोमेश रजनी से बोला – "एक बात है जो मुझे बहुत बुरी लग रही है।"

"क्या?"

"माँ यहाँ क्यों नहीं हैं?"

तो चलो जल्दी चलकर माँ को बुला लाएँ।



"लेकिन बाबूजी नाराज तो नहीं हो जाएँगे! किसी बच्चे की माँ यहाँ नहीं है!" रजनी ने बाबूजी की तरफ देखते हुए कहा।

"हमारी माँ के आने से बाबूजी क्यों नाराज हों भला! उन्हें तो खुश होना चाहिए। माँ बेचारी ऐसे उत्सवों में कभी शामिल नहीं हो पातीं।" कहता हुआ सोमेश चला गया।

घर में माँ ने सुना तो सन्न रह गई। बोलीं – "वहाँ आदमियों के बीच में मेरा क्या काम?"

"तुम्हें आदमियों से क्या मतलब? वहाँ तुम्हारे बच्चे भी तो हैं।"

सोमेश ने बहुत जिद की तो माँ चलने को तैयार हो गई।

सोमेश ने साइकिल निकाली तो माँ बोलीं – "मैं पैदल ही जाऊँगी।"

"तब तक वहाँ सबकुछ खत्म हो जाएगा। सब लोग आ चुके हैं।" सोमेश की बात माँ को माननी पड़ी।

सोमेश की साइकिल पर बैठी माँ को रजनी ने देखा तो उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। माँ शरमाती-सकुचाती साइकिल से उतरी तो बाबूजी हक्के-बक्के रह गए।

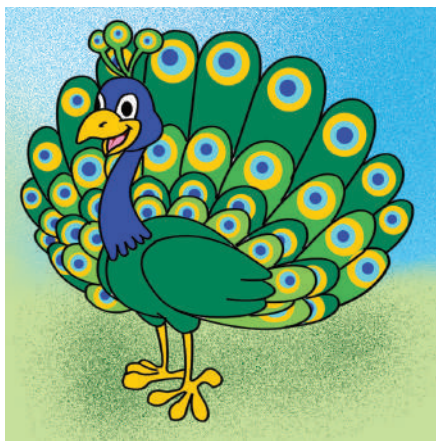
स्टेशन मास्टर चाचा ने आगे बढ़कर माँ का स्वागत किया– "आइए भाभीजी, बच्चों ने आपको लाकर बहुत अच्छा किया। हम पिता लोग तो घरों से बाहर रहते हैं। आप माताओं की ही प्रेरणा है कि जिस बात की हम कल्पना भी नहीं कर सकते थे, बच्चों ने वह कर दिखाया।"

कहते हुए स्टेशन मास्टर चाचा ने बंटू को एक माला पकड़ा दी। उसने बढ़कर सोमेश की माँ के गले में वह माला डाल दी। एक बार फिर से तालियाँ बज उठीं। माँ ने सब बच्चों को मिठाई बाँटी।

कार्यक्रम खत्म हुआ तो माँ के साथ बाबूजी भी बहुत खुश थे। इतना अच्छा स्वतंत्रता दिवस पहली बार मनाया गया था।

सजा हुआ इंजन सारे आगंतुकों को दूर जाते देख रहा था। उसके फूल फरफरा रहे थे। वह सोच रहा था– "काश कि स्वतंत्रता दिवस रोज आता। रोज मुझे सजाया जाता और इतने बच्चे मेरे दोस्त बन जाते!"

(1999)



तितली की सहेली

मौसम खुशनुमा था। चारों ओर ठंडी हवा बह रही थी। बगीचे में खिले हुए फूलों की खुशबू के कारण सबकुछ और भी अच्छा लगता था। एक थी तितली।

चारों ओर फूल ही फूल खिले थे। इसलिए तितली कभी इधर उड़ती तो कभी उधर। वह, समझ नहीं पा रही थी कि किस फूल पर बैठे।

अचानक उसकी नजर एक सुर्ख गुलाब पर पड़ी।

तितली वहाँ बैठना ही चाहती थी कि उसका पंख एक नुकीले काँटे में फँस गया। वह दर्द से कराह उठी। उसने कातर दृष्टि से गुलाब की ओर देखा। मगर गुलाब के कोई हाथ तो थे नहीं कि हाथ बढ़ाकर काँटा निकाल देता।

बड़ी मुश्किल से तितली ने काँटे की गिरफ्त से अपने पंख को निकाला, मगर पंख तो टूट चुका था।

तितली की समझ में न आया कि अब वह उड़ेगी कैसे?

एक तोता बहुत देर से उदास तितली को देख रहा था। जब उसे उसकी परेशानी पता चली तो बोला मोर के पास तो बहुत से पंख होते हैं। वैसे भी वह अपने आप पंख गिराता रहता है। तुम क्यों नहीं एक पंख उससे ले लेती।

तितली को यह बात अच्छी लगी। वह तुरंत मोर के पास पहुँची।



लेकिन मोर तो नाच रहा था। थोड़ी देर के लिए वह रुकता, फिर आसपास के घने बादलों को देख मोर नाचता रहा।

जब उसका नाच बंद हुआ तो तितली ने उसे अपने मन की बात बताई।

अरे तो इसमें कौन-सी बड़ी बात है कहते हुए मोर ने अपना लम्बा-सा एक पंख निकाला और तितली को दे दिया।

बेचारी नन्ही-सी तितली वह इतने बड़े पंख को लगाती कैसे, वह तो उसे उठा भी नहीं सकती थी। उसने पंख का सहारा लेने की बहुत कोशिश की मगर नाकामयाब रही।

वहाँ से उड़ी तो मधुमक्खियों के छत्ते के पास पहुँची। मधुमक्खी ने उसकी बात सुनकर फौरन शहद की मदद से एक पंख चिपका दिया।

खुश होते हुए वह मिट्टी के एक टीले पर बैठ गई।

वहाँ चींटियों का एक बिल था। चींटियों को जैसे ही शहद की खुशबू आई वे तितली की ओर दौड़ पड़ीं।

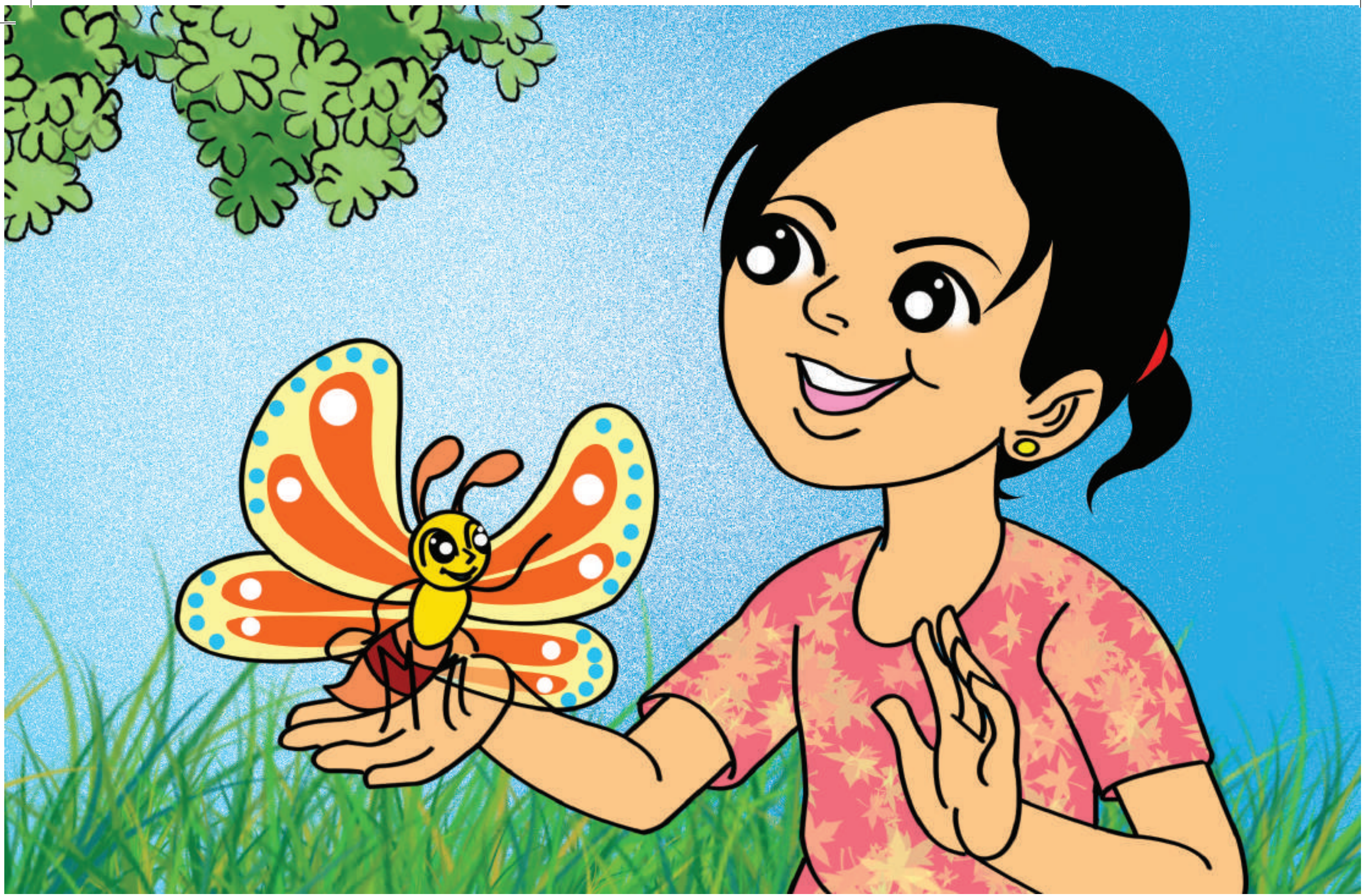
बेचारी तितली वहाँ से जान बचाकर भागी। दौड़ते-दौड़ते वह इतनी थक चुकी थी कि जमीन पर गिर पड़ी।

तभी उसने कोमल स्पर्श महसूस किया। नन्ही-सी बच्ची जिसका नाम मिली था वह अपने हाथों में लेकर उसे ध्यान से देख रही थी।

उसने घायल तितली को अपने बगीचे में बिठाया। फिर उसके घायल पंख पर दवा लगायी।

इतनी देर में पहली बार तितली को आराम मिला था। अब मिली हर वक्त तितली का ध्यान रखती। उसे प्यार से देखती। अपनी हथेली पर बिठा इधर-उधर घुमाती। उससे कहती – तुम जब ठीक होकर यहाँ से चली जाओगी तो मुझे तुम्हारी बहुत याद आएगी।

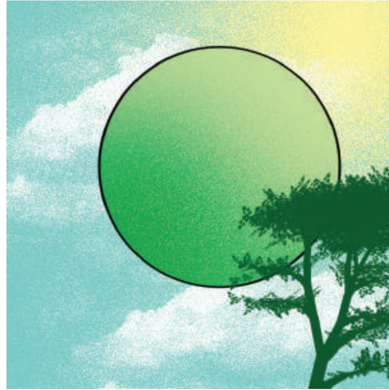
हुआ भी ऐसा ही। जब तितली ठीक हो गई तो बाहर की दुनिया के बारे में सोचने लगी। एक सुबह उसने सोचा कि आज तो वह जरूर यहाँ से उड़ जाएगी। लेकिन उसे



मिली का ध्यान आया। उसे लगा कि यदि वह चली जाएगी तो मिली बहुत उदास हो जाएगी। आखिर इतनी अच्छी सहेली को छोड़कर वह क्यों जाए? जब वह मुसीबत में थी, थकी हुई और परेशान थी तो मिली ने उसका कितना ध्यान रखा था।

बस उसने फैसला किया कि अब वह हमेशा मिली के साथ उसके बगीचे में ही रहेगी। मिली भी अपनी नन्ही सहेली को पाकर बहुत खुश थी।

(2006)



हरा सूरज

बच्चों की क्लास में सारी आवाजें मिलकर ऐसे आ रही थीं जैसे ढेर सारी मधुमक्खियाँ अपने छत्ते के पास मिलकर भिनभिना रही हों।

मिस सिंह घूम-घूमकर देख रही थीं - एक बच्चे ने ड्राइंग की कॉपी में हरा सूरज बना दिया था।

उसे देखकर उन्होंने पूछा - "अरे भाई ये कैसा सूरज है। क्यों बच्चो सूरज का रंग कैसा होता है?"

एक बच्चे ने कहा ऑरेंज, दूसरे ने कहा रेड, तीसरे ने कहा पीला।

यानी कि तुम तीनों को अलग-अलग समय का सूरज याद है। जिसने रेड कहा उसने सवेरे या शाम को देखा होगा। जिसने ऑरेंज कहा उसने उषा के कुछ बाद, जिसने पीला कहा उसने दोपहर को। मगर क्या किसी ने हरा सूरज देखा है?

"नो मैम?" बहुत से बच्चों ने कहा। एक आवाज आई - "यस मैम।"

मिस सिंह देखकर हैरान थीं, यह वही बच्चा था जिसने हरा सूरज बनाया था। उन्हें थोड़ा गुस्सा आया। कहा - "बताओ कब देखा था तुमने हरा सूरज।"

"मैम तब हमने हरे लैंस का चश्मा लगाया था।" उसकी बात सुनकर सब बच्चे हँसने लगे तो वह बोला - "लेकिन मैम मेरी मम्मी कहती हैं कि जो चीज हम जैसी देखना चाहते हैं वैसी ही बनानी चाहिए।"

"तो तुमने सूरज को हरा क्यों बनाया?"

"इसलिए मैम कि अगर सूरज हरा हो गया तो इतना बड़ा पेड़ हो जाएगा कि चारों तरफ छाया ही छाया हो जाएगी।"



"तब गरमी भी नहीं लगेगी, आइसक्रीम भी जल्दी नहीं पिघलेगी। आते-जाते इतना भारी बस्ता उठाए पसीना भी नहीं आया करेगा।" मिस सिंह नहीं समझ पाईं कि इतना छोटा बच्चा ऐसी बातें कैसे कर रहा है, जैसे कि बड़े भी नहीं करते। इतने दिन ड्राइंग पढ़ाते हो गए, मगर हरा सूरज बनाने की बात आज तक उनके मन में नहीं आई।

आगे बढ़ीं तो एक बच्ची मीनू ने अपनी पूरी ड्राइंग कॉपी पर लाल रंग फैला रखा था। उन्होंने इस बारे में पूछा तो बच्ची ने भोलेपन से कहा - "मैम-मैम जब हम यह ड्राइंग कर रहे थे तो एक चिड़िया उड़ती-उड़ती आई और उसने अपने पंखों से रंग फैला दिया।"

"झूठ बोल रही हो।"

"जी मैम।"

"क्यों?"

"अगर हम सच कह देते तो आपसे डाँट पड़ती।"

"सच के लिए डाँट।" - मिस सिंह ने सोचा- "नहीं कभी नहीं। सच बोलने वाले बच्चे को वह कभी नहीं डाँटेंगी।"

और वह मुस्कराते हुए आगे बढ़ गईं।

(2008)





बस्ते

सवेरे-सवेरे जब बच्चे स्कूल के लिए निकलते तो उनके हाथ में पानी की बोतल और कंधे पर बस्ता होता था। दोपहर में भी ऐसा ही होता था। अकसर बड़े और बच्चे बस्तों के बारे में बातें करते।

किताबों की बात सुनकर बस्तों ने भी हाँ में हाँ मिलाई- "सही कहती हो बहन, हम न हों तो आदमियों के ये बच्चे क्या करें?"

"तो अब हम क्या करें?"

"क्यों न हम इनसे दूर चले जाएँ?"

"चलो ऐसा ही करते हैं।"

बस्तों और किताबों ने क्या तय किया है, यह किसी को पता नहीं चला।

स्कूल की छुट्टी के वक्त बच्चे अपने-अपने बस्तों को कंधे पर लटकाए स्कूल से बाहर निकले। गली से होते हुए बच्चे आगे बढ़े।

जैसे ही वे सड़क पर पहुँचे उनके कंधे पर लटके बस्ते उनके कंधों से कूद पड़े और वे इतनी तेजी से भागे, जैसे उनके पहिए लग गए हों। बच्चों की कुछ समझ में नहीं आया कि ये बस्तों को क्या हुआ? बच्चे उनके पीछे भागे। बस्ते दौड़ रहे थे जैसे कि उन्हें किसी दौड़ में भाग लेना था। सड़क पर चल रहे लोग भी इस अनोखी दौड़ को देखने लगे।

जैसे ही बच्चे बस्तों के पास पहुँचते, बस्ते हवा में उड़ते हुए दौड़ती हुई कारों के ऊपर जा चढ़ते। कार वाले कार रोकते। उन्हें लगता कि सड़क पर दौड़ते बच्चे ही

यह शैतानी कर रहे हैं। अपने-अपने बस्तों को चलती कारों पर फेंक रहे हैं। लेकिन यह क्या, जैसे ही कार वाले बस्तों की तरफ हाथ बढ़ाते, वे उड़ते हुए आसपास लगे पेड़ों पर लटक जाते। कई कार वाले तो यह देखकर थर-थर काँपने लगे। कुछ को जादू-टोना लगा। एक लाल रंग की कार वाला तो डरकर बेहोश भी हो गया।

अब हुआ यह कि चाहे वह नीम का पेड़ था, आम या कचनार का, चम्पा और अमरूद का अथवा खट्टा इमली का ही, जिसपर देखो उस पर एक से एक बस्ते झंडियों की तरह लहरा रहे थे कोई लाल था, कोई नीला, कोई पीला, कोई ब्राउन तो कोई सफेद। यही नहीं किसी पर स्पाइडरमैन कूद रहा था, कोई बैटमैन से सजा था, किसी पर मिकी माउस बड़े-बड़े कानों को हिला रहा था।

पेड़ों पर तो जैसे कार्टूनों की दुनिया ही उग आई थी।

ये सारी बातें एक और बस्ते पर बना मिकी माउस भी सुन रहा था। वह बोला - "इस महाबली स्पाइडरमैन से अच्छा तो मैं ही हूँ। बोलो क्या कुतरना है।"

चूहे की यह बात सुनकर अब तक चुपचाप बस्ते में बैठे स्पाइडरमैन को गुस्सा आ गया। वह बोला - "चुप, बहुत बड़ी-बड़ी बातें बना रहा है। बित्ते भर का है और जुबान है गज भर की।"

"बित्ते भर का हूँ तो क्या हुआ? तुम्हारी तरह डरपोक तो नहीं हूँ। जो जितना डरपोक होता है उतनी ही बड़ी-बड़ी बातें बनाता है।" चूहा उसे चिढ़ाता हुआ बोला। चूहे की बात सुनकर बाकी बस्तों पर बने दूसरे जानवर स्पाइडरमैन को चिढ़ाने लगे। हा-हा-ही-ही करने लगे। नीचे खड़े बच्चे बस्तों के भीतर से उठते शोरगुल को सुन रहे थे। उन्हें इस बात का भी डर था कि अगर जल्दी वे घर नहीं पहुँचे तो उनके मम्मी-पापा कितने डरेंगे? कुछ तो पुलिस को भी फोन कर देंगे। कई मम्मियाँ तो डर के मारे बेहोश ही हो जाएँगी। मगर बिना बस्ते और किताबों के वे घर भी वापस कैसे जाएँ। तब बच्चों को अपने सोसायटी के रामू अंकल की याद आई। यों तो रामू अंकल सोसायटी के चौकीदार थे, मगर बच्चों से उनकी काफी दोस्ती थी। बच्चों के कहने पर वे गेट के सामने लगे इमली के पेड़ से इमली और अमरूद के पेड़ से कच्चे अमरूद तोड़कर देते थे। रामू अंकल थे भी बहुत अच्छे। उनकी लम्बी-मोटी मूँछें थीं। सिर पर हमेशा बड़ा-सा पग्गड़ पहनते और हाथ में बड़ी लाठी रखते।



जब चलते तो लाठी की ठक-ठक दूर तक सुनाई देती।

पेंसिल बॉक्स चुप होता, उससे पहले ही पेंसिल चीखी - "तुझे क्या दुख है, हमें देख जैसे रख दिए जाते हैं वैसे ही पड़े रहते हैं। करवट तक नहीं ले सकते। सीधे पड़े-पड़े हड्डियाँ अकड़ जाती हैं। ऊपर से यह परकार है, इसकी नोक हमेशा चुभाती रहती है। वैसे तो यह रबड़ मेरी दुश्मन है। इसका वश चले तो मेरा नामोनिशां मिटा दे। मगर मुझे तो इस पर भी तरस आता है, मेरी तरह इसका भी दम घुटता होगा। है कोई हमारी मदद करने वाला।"

जिन पेड़ों पर ये बस्ते लटके हुए थे वे भी उनकी बातें चुपचाप सुन रहे थे। एकाएक नीम बोला- "तुमसे किसने कहा था जो तुम कार की छत से कूदकर हमारे ऊपर आ चढ़ो। इतनी देर से बक-बक-बक किए जा रहे हो। हम पेड़ों को तुमसे क्या मतलब। हमारी शांति क्यों भंग कर रहे हो? हम न तो तुम्हारी तरह कहीं आते हैं, न जाते हैं। हम तो बस एक ही जगह खड़े रहते हैं। बरसों -बरस बिना हिले-डुले। न किसी से कुछ माँगते हैं, मगर हम किससे कहें। फिर भी आदमी का जब मन आता है, हमें पत्थर मारता है, जब मन करता है जड़ समेत काट देता है। मगर क्या करें?" नीम की बात आम का पेड़ भी सुन रहा था - "ठीक कह रहे हो नीम। तुम कड़वे हो मैं मीठा। हम दोनों का उपयोग आदमी अपनी-अपनी तरह से करता है और जब चाहे हमारी जान ले लेता है।"

"हाँ हाँ- चाँदनी और चम्पा बोली-पूजा में हम काम आएँ। आज तो गैस हो गई, कल हम न होते तो आग कहाँ से जलती, रोटी कैसे पकती, सब भूखे मरते, मगर किसी को हमारी परवाह नहीं।"

"हाँ .... हाँ।" पेड़ और बस्ते एक साथ चिल्लाए।

"तो फिर चलो।" कहते हुए स्पाइडरमैन ने अपना एक हाथ बढ़ाया और सब पेड़ों को जड़ से उखाड़कर अपने कंधे पर रख लिया। बस्ते गिरने के डर से चिल्लाने लगे। मगर स्पाइडरमैन तो उन्हें अपने कंधे पर लिए उड़ा जा रहा था। जल्दी ही वह आँखों से ओझल हो गया।

उधर बच्चे जब रामू अंकल को ढूँढ़ते हुए पहुँचे तो वह पार्क में पड़े सो रहे थे। उनके खर्राटों से उनकी मूँछें ऊपर नीचे हो रही थीं। उनका पग्गड़ सिर से हटकर कंधे पर आ गया था। लाठी एक ओर पड़ी थी। अब उन्हें उठाया कैसे जाए?



एक बच्ची को तरकीब सूझी। उसने रामू अंकल की लाठी उठाई, जोर से ठकठक करने लगी। मगर वह आवाज अंकल के कानों तक नहीं पहुँची।

अब?

एक बच्चे ने घास का एक तिनका उठाया और रामू अंकल की नाक में लगाने लगा। अचानक रामू अंकल को छींक आई छीं..छीं..छीं..और वह झटके से उठ - बैठे।

"क्या बात है बच्चो कोई तुम्हें परेशान कर रहा है।"

कहते हुए उनका हाथ अपनी लाठी पर चला गया, दूसरे हाथ से उन्होंने अपनी पगड़ी संभाल ली - "कौन तंग कर रहा है।"

बच्चों को अपनी बात कहने में परेशानी हुई। फिर हिम्मत करके बोले - "अंकल बस्ते।"

(2008)

आइडियल पब्लिशिंग साल्यूशंस, दिल्ली द्वारा शब्द संयोजन तथा एजुकेशनल स्टोर्स, गाजियाबाद (उ.प्र.) द्वारा मुद्रित

डॉ. क्षमा शर्मा (अक्टूबर, 1955) एम.ए. (हिंदी), पत्रकारिता में डिप्लोमा, साहित्य और पत्रकारिता में पीएच.डी.। 18 साल की उम्र में पहली कहानी प्रकाशित। हिंदी बाल सहित्य में देश के वरिष्ठ लेखकों में से एक, क्षमाजी लगभग 38 साल तक बच्चों की पत्रिका 'नंदन' के संपादकीय विभाग से जुड़ी रहीं। बच्चों के लिए 20 उपन्यास, 16 कहानी संग्रह के साथ-साथ स्त्री विमर्श पर कई पुस्तकें। देश के सभी ख्यातलब्ध पत्र-पत्रिकाअें के लिए नियमित लेखन। हिंदी अकादमी, दिल्ली द्वारा दो बार पुरस्कृत, बाल कल्याण संस्थान, कानपुर, इंडो रूसी क्लब, नई दिल्ली तथा सोनिया ट्रस्ट, नई दिल्ली द्वारा सम्मानित, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र पुरस्कार सहित कई पुरस्कार व सम्मान।

मित्रारूण हलधर ने चित्रकला की शिक्षा कोलकता गवर्नमेंट कालेज ऑफ आर्ट एंड क्राफ्ट से प्राप्त की। उन्होंने यूएनपीओ और इंदिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय के लिए कई डिजाईन तैयार किए। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास आदि प्रकाशनों के लिए पुस्तकों का चित्रांकन।

